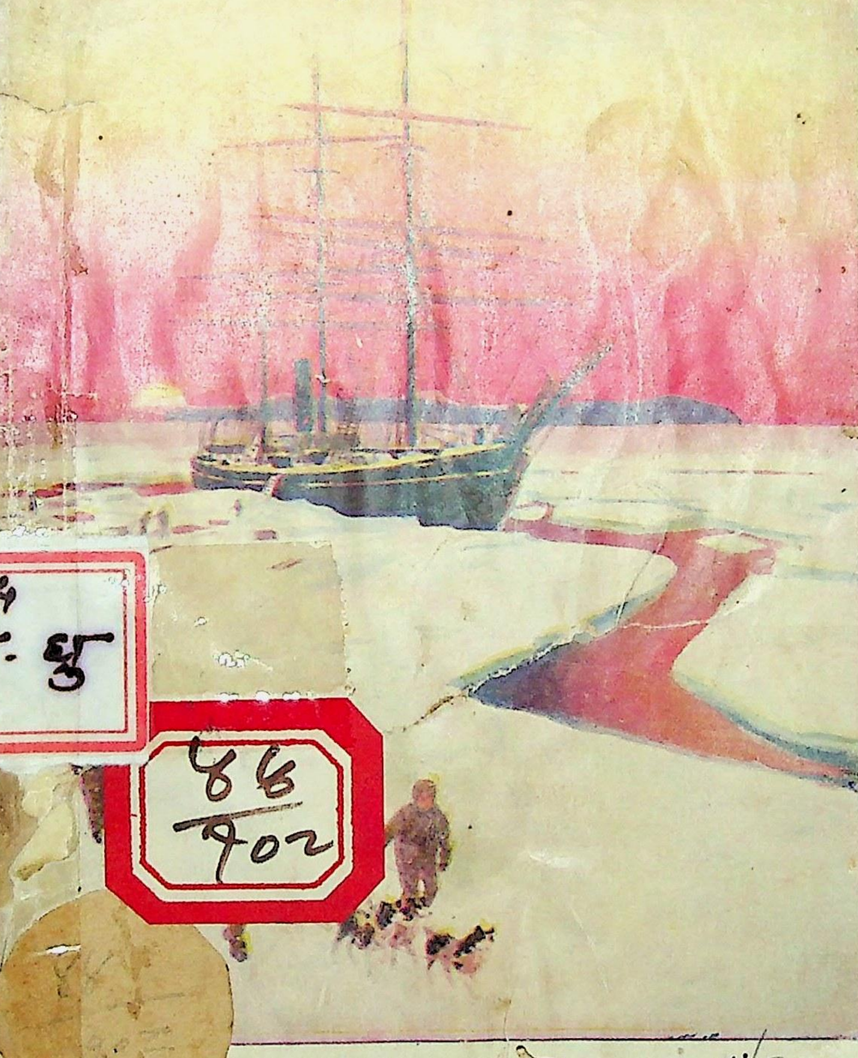
ध्रुव-यात्रा



ध्रुव-यात्रा

सम्पादक

ठाकुरदत्त मिश्र

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

सन् १९३७

मूल्य ॥=)

विषय-सूची

—

ध्रुव-यात्रा

पहला अध्याय

ताऊ जी

स्कूल से आने पर मास्टर मदन पहले कुछ जल-पान करता, फिर अपने स्काउट मित्रों के साथ थोड़ा व्यायाम करता। तब तक सायंकाल हो जाता। उस समय अध्यापक जी आ जाते। आठ साढ़े आठ बजे तक पढ़ना-लिखना होता रहता। उसके बाद खाना खाकर तुरन्त पलँग पर पहुँच जाता।

विचार कीजिए, जाड़ों की रात पहाड़ के समान होतो है, काटे नहीं कटती। उसके पलँग के पास ही उसके ताऊ (पिता के बड़े भाई) का पलँग होता। उनसे वह आग्रह करने लगता कि ताऊ जी, कुछ अद्भुत बातें सुनाइए।

ताऊ जी को बालकों की शिक्षा-दीक्षा की विशेष योग्यता थी।

उधर मास्टर मदन में पूछ-ताछ की भावना प्रबल थी। वह अनोखी बातों के जानने को सदा उत्सुक रहता था। वह अपने ताऊ के साथ बड़ी उत्सुकता से फूलों के नन्हें नन्हें बीज बोता और जब पौधा निकलते और उनमें फूल खिलते तब वह देर तक बैठकर उनको देखता और उनकी रूप-रेखा आदि पर विचार किया करता।

चाँदनी रात में जब जूही का नन्हा-सा कोमल फूल खिलता और उसकी भीनी सुगन्ध से सारा घर महक उठता तब वह या तो कभी सुगन्ध की हलकी हलकी तरङ्गों के विषय में सोचता या चन्द्रमा की किरणों पर कुछ सोचने लगता।

कभी उसका ध्यान उसकी बहन सरला की ओर आकर्षित हो जाता। उसका डेढ़ फ़ुट का शरीर, बिखरे हुए केश, कोमल कोमल हथेलियाँ, मीठी मीठी बातें उसको घण्टों आश्चर्य्य और विस्मय में डाले रहतीं।

संयोग से जब कभी उसे ताऊ जी मिल जाते तब वह आकाश-मण्डल के बादलों, इन्द्रधनुष के रङ्गों, जङ्गलों तथा देशों और संसार की बड़ी बड़ी घटनाओं के सम्बन्ध में आग्रह करके पूछा करता, और ताऊ जी जब इन बातों का वर्णन करने लगते तब वह बड़े चाव तथा आश्चर्य के साथ सुनने लग जाता और देर तक सुनता रहता।

आज भी मास्टर मदन ने अद्भुत बातों के सुनाने का आग्रह ताऊ जी से किया। ताऊ जी कुछ दिन पहले से ही ध्रुव-देशों के सम्बन्ध की किताबें पढ़ रहे थे। बालक के आग्रह से लाचार होकर उन्होंने ध्रुव-देश के सम्बन्ध में बात-चीत आरम्भ कर दी।

उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव

ताऊजी—पृथ्वी के सम्बन्ध में तो तुम्हें यह मालूम ही होगा कि वह नारङ्गी की भाँति गोल है। तुमने भू-मण्डल के नक़शे में

यह देखा होगा कि पृथ्वी का धरातल पाँच भागों में बाँटा गया है। ये भाग कटिबन्ध कहलाते हैं। इनमें से उत्तर तथा दक्षिण के अंतिम कटिबंधों को उत्तरी कटिबंध तथा दक्षिणी कटिबंध कहते हैं। यहाँ आधे ग्रीष्म-ऋतु में लगातार दिन होता है और आधे शरद्-ऋतु में लगातार रात होती है। ध्रुवों के चारों ओर का देश अत्यन्त ठंडा है। इसी कारण उनको 'उत्तरी शीत कटिबन्ध' तथा 'दक्षिणी शीत कटिबन्ध' कहते हैं। ये स्थान इतने अधिक ठंडे होते हैं कि इनमें कठिनता से कोई प्रवेश कर सकता है। चारों ओर बड़े बड़े ग्लेशियर और मीलों तक बर्फ़ के लगातार सूनसान और बिना वृक्ष के मैदान दिखाई पड़ते हैं।

मास्टर मदन—ग्लेशियर क्या वस्तु है ?

ताऊ जी—बर्फ़ के बड़े बड़े टीलों को ग्लेशियर कहते हैं।

मास्टर मदन—अच्छा, आप कह रहे थे कि शीत कटिबन्ध में कठिनता से कोई प्रवेश कर सकता है।

उत्तरी ध्रुव की खोज का वर्णन

ताऊ जी—हाँ, इन स्थलों का हाल जानने का प्रयत्न भिन्न भिन्न समयों में बराबर होता रहा है। इस प्रकार की खोज के लिए बड़ी वीरता व पुरुषार्थ की ज़रूरत है, क्योंकि जानबूझकर हिम के अथाह सागर में स्वयं को नष्ट कर देना कोई सरल बात नहीं है। उत्तरी ध्रुव की ओर पहला यात्री-दल

इँग्लिस्तान के बादशाह हेनरी (अष्टम) की आज्ञा से सन् १५१७ ई० में गया था। इस दल का उद्देश अमरीका की ओर से भारत जाने का मार्ग ढूँढ़ना था। इसके पीछे इस प्रकार की यात्रा ने मनोविनोद का रूप धारण कर लिया। फ्रॉब्शर-ड्यूस और हडसन आदि ने मार्गों की खोज का विशेष प्रयत्न किया। इससे लगभग दो सदियों के बाद उत्तरी शीत कटिबन्ध की खोज करने रास तथा पीरी आदि सन् १८१८ ई० में गये। उनके पीछे सर जान फ्रेंकलिन ने सन् १८४५ में अपनी यात्रा की। फ्रेंकलिन के जहाज़ डेवस स्ट्रेट तक तो दिखाई दिये, इसके पीछे फिर उनका पता न चला। फ्रेंकलिन की खोज में बहुत-से अँगरेज़ और अमरीकन यात्री सन् १८१५ ई० तक भिन्न भिन्न समयों में जाते रहे, परन्तु फ्रेंकलिन तथा उसके साथियों का पता न लगा।

सन् १८५० ई० में मैक कल्योर ने यात्रा की। जिस उत्तरी-पश्चिमी मार्ग की खोज बहुत दिनों से हो रही थी उसका पता उसने लगा लिया। इसके पश्चात् १८५५ तक तत्परता से यात्री-दल जाते रहे। १८५३ ई० में राय तथा एन्डर्सन ने फ्रेंकलिन तथा उसके साथियों के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने का पता पा लिया। अंत में मैक कलन्टाक ने १८५७-१८५९ में फ्रेंकलिन के सम्बन्ध की संदिग्ध बातों को स्पष्ट कर यह सिद्ध कर दिया कि फ्रेंकलिन तथा उसके साथी सन् १८४७ ई० में मर गये थे

इसके पश्चात् डाक्टर कीन ने उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्ध की कुछ और बातों का १८५३—१८५५ में पता लगाया। फिर १८६४ ई० में डाक्टर इसहाक़ हेज़ तथा कैप्टेन चार्ल्स हाल ने कुछ बातों का पता लगाया। इसी भाँति सागर में से उत्तरी-पूर्वी मार्ग को भी ज्ञात किया। इसके अतिरिक्त भिन्न भिन्न समय में अन्य समुद्री तटों का भी पता लगाया गया।

नई खोज

नई खोज का असली मतलब यह था कि जहाँ तक संभव हो, ध्रुव के समीप पहुँचा जाय। इसके लिए जर्मनी ने अपना प्रथम यात्री दल कप्तान कोलडेव की अध्यक्षता में भेजा तथा दूसरा १८६६ ई० में। फिर १८७३ ई० में आस्ट्रेलियावालों ने अपना जत्था भेजा। सन् १८७५ ई० में ब्रिटिश सरकार ने अपना यात्री-दल कप्तान नैरिस की अध्यक्षता में भेजा। यह ग्रोनलेंड की पश्चिम-दिशा तक गया और अक्टूबर १८७६ ई० में लौट आया। इस यात्री-दल की एक टोली ८३-२० अक्षांश तक पहुँच गई थी। अमरीका के संयुक्त-राज्य के लेफ्टिनेंट ग्रेली की अधीनता में भी एक जत्था गया, परन्तु उसकी खाद्य-सामग्री समाप्त हो जाने पर उसे अत्यन्त क्षति पहुँची।

इसके पश्चात् डाक्टर नेनसन १८९३ ई० में ८६-१४ के अक्षांश तक पहुँच गये। उनके पहले यहाँ तक कोई यात्री

नहीं पहुँच सका था। कमान्डर पेरी ने उत्तरी ग्रीनलेंड तथा अन्य स्थानों पर विलक्षण कार्य किये और १९०९ ई० में उन्होंने ध्रुव तक पहुँच जाने की सार्वजनिक घोषणा कर दी। डाक्टर कुक नामक एक अमरीकन व्यक्ति ने भी इसके पश्चात् घोषित किया कि वे भी सन् १९०८ ई० में वहाँ तक पहुँच गये थे।

वायुयान-द्वारा उत्तरी ध्रुव की यात्रा

मास्टर मदन—ध्रुव पर पहुँचने के लिए यदि वायु-यानों-द्वारा यात्रा की जाती तो बड़ी सुविधा होती।

ताऊ जी—सन् १८९७ ई० में जब वायुयानों की कला अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी उस समय एस० ए० अंडरी ने स्पिटूज़बर्जन से एक गुब्बारा की सहायता से यात्रा की थी। सन् १९१० ई० में भी इसी प्रकार का एक असफल प्रयत्न किया गया। महायुद्ध के समय से वायुयानों में बहुत बड़ी उन्नति हुई है। यद्यपि उन्नत वायुयानों-द्वारा यात्रा सुगम होगई है, तो भी ध्रुव-यात्रा का असली मतलब उनसे पूरा नहीं हो सका। यात्रा का उद्देश तो यह है कि उन स्थानों की अवस्था की ठीक ठीक देख-भाल की जाय, परन्तु वायुयान जैसी तेज़ सवारी पर बैठकर इन बातों का पूरा अनुभव नहीं प्राप्त किया जा सकता।

मास्टर मदन—तो क्या इसी विचार से आधुनिक उन्नत वायुयानों-द्वारा किसी ने यात्रा नहीं की ?

ताऊ जी—ऐसा नहीं है। सन् १९२५ ई० में आर० अमेंडसन ने वायुयान-द्वारा उत्तरी ध्रुव की यात्रा की थी। किन्तु इस यात्रा से केवल इतना ही ज्ञात हो सका कि वहाँ वायुयान का चलाना बहुत कठिन है। मार्ग विकराल तथा दुस्तर है और वायुयान के लिए तेल का ख़र्च अनुमान से अधिक होता है। इसी भाँति और दो-एक मनुष्यों ने वायुयान-द्वारा यात्रा की और कुछ लोग तो ध्रुव को भी पार कर गये। परन्तु जैसा कि मैंने कहा है, इस प्रकार की यात्रा से निरीक्षण तथा अनुसंधान के वास्तविक उद्देश की पूर्ति नहीं होती है।

मास्टर मदन—अच्छा तो ताऊ जी, उत्तरी ध्रुव में कौन वस्तुएँ पाई जाती हैं ?

ताऊ जी—धुर उत्तरी ध्रुव तथा दक्षिणी ध्रुव पर तो हिम के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु नहीं है। हाँ, उत्तरी या दक्षिणी कटिबन्ध के प्रदेशों में अलबत्ता कुछ वस्तुएँ पाई जाती हैं। मैं तुमसे उनका वर्णन करता हूँ।

———

फा० २

दूसरा अध्याय

पैदावार

फूल और घास

ताऊ जी—उत्तरी ध्रुव के प्रदेशों में जो वनस्पतियाँ उगती हैं वे भी वहाँ की विशेष व विचित्र वस्तुएँ हैं। केवल यह कहने से कि अनेक प्रकार के फूलों के पौधे, नाना भाँति की घासें, सेवार और काई आदि होती हैं, वहाँ की वनस्पतियों का ठीक-ठीक अनुमान नहीं हो सकता। वहाँ ऐसा नहीं है कि प्रत्येक ओर हरियाली फैली हुई हो, किन्तु जहाँ-तहाँ कुछ पौधे बिखरे हुए खड़े देख पड़ते हैं। उन स्थानों में जहाँ ग्लेशियर या किसी आकार में हिम की अधिकता नहीं होती, वहाँ हरी-भरी घासें उगी हुई होती हैं और भाँति भाँति के फूल भी खिले हुए रहते हैं। ये फूल उन्हीं भागों में उत्पन्न होते हैं, अतएव उनके अपने नामों से उनके आकार-प्रकार का ठीक ठीक अनुमान नहीं हो सकता। वहाँ के कुछ फूलों के ये नाम हैं—पीला 'बटर कप', 'सेक्सी फ़्रेग,' बैंगनी 'ककू फ़्लावर,' नीला 'पूलमनिम', लाल 'मोरलेंड'। इसी प्रकार अन्यान्य छोटी-बड़ी घासें और भाँति भाँति के पौधे भी हैं, जिनको 'फर्न', 'हार्स-टेल' इत्यादि कहते हैं। सफ़ेद तथा पीले पोस्ते का फूल जिसको

'लाला' कहते हैं, वहाँ कहीं कहीं दिखाई देता है। उत्तरी ग्रीनलेंड में कुछ चरागाह हैं और लगभग १२० प्रकार के फूलों के पौधे भी पाये जाते हैं।

वृक्ष

मास्टर मदन—और वहाँ बड़े-बड़े वृक्ष नहीं होते ?

ताऊ जी—शायद ही कहीं कोई वृक्ष जम आता हो।

मास्टर मदन—इसका क्या कारण है ?

ताऊ जी—कारण यह है कि उत्तरी ध्रुव प्रदेशों में हिम की अधिकता तो होती ही है, वायु भी बहुत ज़ोर से चलती है। वृक्षों का जमना या उनका खड़ा रहना वहाँ कठिन है। यही कारण है कि जो पौधे होते भी हैं, प्रायः भूमि से मिले हुए होते हैं और नीचे ही नीचे फैलते हैं। पूर्वी साइबेरिया में जहाँ वायु उतनी अधिक तेज़ नहीं बहती है, वृक्षों की सुन्दर पाँतें दिखाई देती हैं। अलास्का तथा ग्रीनलेंड के दक्षिण-पश्चिम में कुछ साधारण वृक्ष होते हैं। ग्रीनलेंड में बेंत के २० फ़ुट ऊँचे वृक्षों को देखकर यह जान पड़ता है कि इस देश के दक्षिण-पश्चिम में ठीक ठीक उत्तरी प्रदेशों जैसी जल-वायु नहीं है। विक्टोरियालेंड में भी आठ आठ फ़ुट ऊँचे बेंत के वृक्ष विद्यमान हैं। कैनेडियन द्वीप-समूह और ग्रीनलेंड में भी आवश्यकता के अनुसार चरागाह हैं। उत्तरी ध्रुव-देश की नील गायें इन्हीं में चर

कर जीवित रहती हैं। इन स्थानों में तथा अन्य स्थानों में भी बेंत के वृक्ष और भिन्न भिन्न प्रकार के पौधे भी होते हैं। इनकी पत्तियाँ रेनडियरों के काम आती हैं।

अनाज तथा तरकारियाँ

मास्टर मदन—और वहाँ फल और अनाज का क्या हाल है?

ताऊ जी—यद्यपि भूमि अच्छी है, तथापि ऋतु और जल-वायु की प्रतिकूलता के कारण वहाँ किसी प्रकार का अनाज नहीं उत्पन्न होता। दक्षिणी ग्रीनलेंड के कुछ स्थानों में कुछ तरकारी जैसी वस्तुएँ तो उत्पन्न हो जाती हैं, परन्तु अनाज वहाँ भी नहीं उत्पन्न होता।

मास्टर मदन—कौन कौन-सी तरकारियाँ होती हैं?

ताऊ जी—करमकल्ला, शलजम, गाजर, मूली के सिवा आलू भी उत्पन्न होता है, परन्तु बहुत छोटा छोटा होता है। वहाँ की स्क्रीमो-जाति खेती की ओर कुछ भी ध्यान नहीं देती। स्पिट्ज़बर्जन में तरकारी उगाने का बहुत प्रयत्न किया गया, किन्तु सफलता नहीं हुई।

फल

मास्टर मदन—तरकारियों के सिवा क्या वहाँ फल नहीं होते?

ताऊ जी—फल होते हैं, किन्तु बहुत साधारण।

मास्टर मदन—किस प्रकार के फल होते हैं ?

ताऊ जी—जामुन और करौंदे जैसे कुछ फल होते हैं। उन्हें 'क्रोबेरी' तथा 'कारल्यूबेरी' कहते हैं। दक्षिणी ग्रीनलेंड में ये फल इतनी अधिकता से होते हैं कि सारी भूमि उनसे ढँक कर काली हो जाती है। डेन्मार्कवाले इन फलों का मुरब्बा भी बनाते हैं। इस्कीमो लोग इनमें चर्बी मिलाकर बड़े चाव से खाते हैं।

मास्टर मदन—और कौन फल होता है ?

ताऊ जी—मैंने अभी कहा है कि जामुन और करौंदे जैसे ही फल होते हैं। क्रोबेरी तथा कारल्यूबेरी के सिवा उन्हीं के जैसे और भी कुछ फल होते हैं, जिनके नाम ये हैं—ब्लू ब्लैक बेरी, बल-बेरी और बोग वहर्टल बेरी। किन्तु ये फल कम पैदा होते हैं और ये इस्कीमो लोगों को पसन्द भी नहीं हैं। काऊ बेरी भी बहुत कम होता है। क्लाउड बेरी ग्रीनलेंड तथा स्पिट्ज़बर्जन में पकने नहीं पाता। कनाडा के ध्रुव-देशीय भाग में इस्कीमो लोग इस फल को खाते हैं। इन फलों के सिवा वहाँ कुछ ऐसी घासें भी होती हैं जिनको इस्कीमो लोग तरह तरह से खाते हैं ?

मास्टर मदन—वे लोग घास किस भाँति खाते हैं ? और वह कैसी होती है ?

ताऊ जी—घास को 'स्कार्वी ग्रास' कहते हैं। सलाद भी होता है। इनके सिवा बेंत की कुछ पत्तियाँ भी वे खाते हैं।

इन सबको वे उबाले हुए मांस में मिलाकर खाते हैं। ध्रुवदेशीय नील गाय और रेनडियर के मांस में सेवार मिलाकर भी वे खाते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ फूलों तथा वृक्षों की कोपलों में से कुछ को कच्चा, कुछ को उबालकर और कुछ को मांस में मिलाकर खाते हैं।

ईंधन

मास्टर मदन—परन्तु उबालने के लिए लकड़ी कहाँ से आती है? वृक्ष तो वहाँ कठिनता से ही कोई दिखाई देता है।

ताऊ जी—ग्रीनलेंड में बेंत के वृक्षों की लकड़ी तथा क्रोबेरी इत्यादि की झाड़ियाँ जलाने के काम में लाई जाती हैं। उत्तरी ध्रुव में पीट नामक वृक्ष की लकड़ियाँ मिल जाती हैं। ये जलाने और घर बनाने के काम में आती हैं।

उत्तरी-ध्रुव कटिबन्ध के पशु

मास्टर मदन—उत्तरी ध्रुव-प्रदेश में जब फल-फूल की इस तरह कमी है तब वहाँ पशु इत्यादि भी बहुत कम होंगे।

ताऊ जी—नहीं, ऐसा नहीं है। यही तो विचित्र बात है। वनस्पति की कमी और जल-वायु के प्रतिकूल होने पर भी वहाँ पशुओं की अधिकता है। वे संख्या में ही अधिक नहीं हैं, किन्तु कई प्रकार के भी हैं। केवल वहाँ के कुछ विशेष स्थानों में जहाँ जीवन के चिह्न बिलकुल ही नहीं मिलते हैं, उत्तरी

ध्रुव-कटिबन्ध में पशु काफ़ी संख्या में पाये जाते हैं। स्थल के पशुओं में सबसे अधिक नील गाय होती है।

ध्रुव-देश की नील गाय

मास्टर मदन—ध्रुव-देश की नील गाय क्या खाती और कैसी होती है ?

ताऊ जी—ध्रुव-देश की नील गाय घास या बेंत की पत्ती खाती है और कभी कभी सेवार, काई तथा एक प्रकार के बाँस की पत्ती भी खा लेती है। यह गाय अमरीका के उत्तरी कटिबन्ध की ओर अधिक पाई जाती है और वहाँ इसके बड़े बड़े झुण्ड दिखाई पड़ते हैं। यह उत्तरी कटिबन्ध के द्वीप-समूहों और ग्रीनलेंड के उत्तरी-पश्चिमी तथा उत्तरी भाग में भी पाई जाती है। ग्रीनलेंड के धुर उत्तर या उसके पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम में यह गाय बिलकुल नहीं पाई जाती। इसी प्रकार एशिया तथा योरप के उत्तरी द्वीप-समूहों में भी यह नहीं पाई जाती। प्राचीन समय में इसकी बहुत अधिकता थी, किन्तु इसका शिकार होने के कारण अब इसकी उतनी अधिकता नहीं रही। यह बहुत धीरे धीरे चलती है, इसलिए इसका शिकार बड़ी सुगमता और साधारण हथियारों से किया जा सकता है। गर्मी में दक्षिण की ओर ये गायें नहीं आतीं। यह भी कहा जाता है कि ध्रुव-देश की नील गाय जिस द्वीप में उत्पन्न होती है उससे वह बाहर कभी नहीं जाती। मनुष्यों

के अतिरिक्त इसका मुख्य शत्रु भेड़िया है। यह भेड़िये से अपने तेज़ नुकीले सींगों से खूब लड़ती है।

मास्टर मदन—ध्रुव की नील गाय क्या हमारे देश के बैलों की भाँति पाली भी जाती है या यह एक-दम जङ्गली पशु है ?

ताऊ जी—कहा तो जाता है कि यह पाली जा सकती है। इसका मांस खाया जाता है और इसका ऊन काम में लाया जा सकता है। इसका मांस स्वादिष्ट होता है और इससे वर्ष में पाँच, सात और साढ़े सात सेर तक ऊन भी निकाला जा सकता है।

मास्टर मदन—क्या इस नील गाय के ऊन भी होता है ? क्या उसका भी ऊन उसी प्रकार निकालते हैं, जैसे हमारे यहाँ भेड़ों का ?

ताऊ जी—हाँ, परन्तु नील गाय का ऊन निकाल लेने से यह खटका रहता है कि वह अधिक जाड़े अथवा मच्छड़ों से कष्ट पाकर मर न जाय।

रेनडियर

मास्टर मदन—मैंने एक पुस्तक में पढ़ा है कि उत्तरी कटिबन्ध में रेनडियर नाम का भी एक पशु होता है। कुछ उसका भी वर्णन कीजिए।

ताऊ जी—मैं स्वयं ही उसका वर्णन करनेवाला था। उत्तरी कटिबन्ध में अनेक प्रकार के रेनडियर पाये जाते हैं। नौ जातियों के तो

ग्रोनलेंड में ही होते हैं। फिर उन नौ जातियों की अन्य छोटी छोटी उपजातियाँ भी हैं, जो अमरीका तथा योरप व एशिया के उत्तरी कटिबंध में पाई जाती हैं। रेनडियर एक विचित्र पशु है। स्थान के तनिक परिवर्तन से ही उसकी जाति और विशेषता में भी परिवर्तन हो जाता है। यहाँ तक कि स्पिट्ज़बर्जन का रेनडियर भी एक विशेष जाति का होता है। अब तो कनाडा तथा अलास्का में रेनडियर पाले भी जाने लगे हैं।

रेनडियर गर्मी के दिनों में बेंत की पत्तियाँ और उसके डंठल खाता है। जाड़े के दिनों में वह काई खाता है और कभी कभी सेवार भी खा लेता है। जाड़े के दिनों में यदि संभव हुआ तो वह दक्षिण की ओर चला जाता है, परन्तु स्पिट्ज़-बर्जन तथा ग्रोनलेंड आदि उत्तरी प्रदेशों में भी उसे चरने को मिल जाता है। इससे वह वहीं बना रहता है। वह अपने चौड़े खुरों से चार चार फ़ुट मोटी बर्फ़ खोदकर उसके नीचे के पौधे तथा वनस्पतियाँ निकाल लेता है। इधर जब से इस्कीमो लोगों को बंदूकें प्राप्त हो गई हैं, उनकी संख्या दिन-प्रति-दिन कम होती जाती है।

मास्टर मदन—इस्कीमो लोग रेनडियर का शिकार करके उसका मांस खाते होंगे ?

ताऊ जी—हाँ, वे उसका मांस खाते हैं, इसके सिवा उसका चमड़ा वस्त्र और तंबू बनाने के काम आता है। हड्डियों और नसों को भी अनेक ज़रूरी कामों में लाते हैं। ग्रोनलेंड-

वाले वर्ष में दो-तीन महीने तक इसका शिकार खेलते हैं। साइबेरिया तथा अलास्का में ता मैं कह चुका हूँ कि ये पाले जाते हैं, किन्तु इस्कीमो लोगों ने रेनडियर के पालने का प्रयत्न अभी तक नहीं किया।

उत्तरी कटिबंध का सफ़ेद ख़रगोश

उत्तरी कटिबंध के कुछ जंतु अपनी रोयेंदार खाल के लिए प्रसिद्ध हैं। ये जन्तु भी वहाँ जड़-पत्ती ही खाकर रहते हैं। इनमें सफ़ेद ख़रगोश की विशेष प्रतिष्ठा है। जहाँ जहाँ वनस्पति की अधिकता होती है, ये झुंड के झुंड दिखाई पड़ते हैं। जाड़ों में ये भी वहीं बने रहते हैं। भेड़िया इनका शत्रु है। इसी प्रकार का एक और छोटा-सा जानवर होता है वह भी भूमि खोद कर रहता है और ख़रगोश से भी अधिक डरपोक होता है। यह जानवर स्पिट्ज़बर्जन को छोड़कर समस्त उत्तरी कटिबंध में अधिकता से पाया जाता है।

भेड़िया

मास्टर मदन—ऐं भेड़िया! क्या भेड़िया भी वहाँ होता है?

ताऊ जी—हाँ! हाँ! भेड़िया भी होता है और अधिकता से होता है। बहुधा इसके झुण्ड के झुण्ड होते हैं। ठीक इसी आकृति का ग्रीनलेंड का कुत्ता भी होता है। कुछ व्यक्तियों का विचार है कि वहाँ का प्रसिद्ध कुत्ता वहाँ के भेड़िये का ही वंशज है। भेड़िया ख़रगोश और लोमड़ी के शिकार पर अपना

निर्वाह करता है, किन्तु सील और कभी कभी रेनडियर और नील गाय को भी मारकर वह अपना पेट भर लेता है।

लोमड़ी

उत्तरी ध्रुव में लोमड़ियाँ दो प्रकार की होती हैं—एक सफ़ेद रोयें की, दूसरी नीले रोयें की। कुछ लोगों की राय है कि यह स्थल का जन्तु है और कुछ इसे जल-जन्तु मानते हैं। सफ़ेद रोयेंवाली लोमड़ी जाड़े के दिनों में एकदम सफ़ेद रंग की होती है, पर गर्मी के दिनों में उसका रंग सफ़ेदी लिये भूरा हो जाता है। जिस समय रीछ किसी सील का शिकार करता है, यह लोमड़ी सावधानी से इधर-उधर ताकती रहती है और जब रीछ खा-पीकर चला जाता है तब यह पहुँचकर उसके बचे-खुचे मांस में अपना भाग लगाती है। मनुष्य इसकी रोयेंदार खाल के लिए इसका शिकार करते हैं। गत पचास वर्ष पूर्व २,००० नीले रंग की और १,००० सफ़ेद रंग की लोमड़ियाँ अपनी खालों के लिए मारी गई थीं। उसके बाद तो उनका और भी अधिक संख्या में शिकार किया गया। स्पिट्ज़-बर्जन में जहाँ बीस वर्ष पूर्व लोमड़ियों के दल के दल इधर-उधर फिरते रहते थे, अब एक भी लोमड़ी नहीं मिलती है। कहते हैं कि अब वहाँ उनका शिकार करना क़ानून से रोक दिया गया है। और यदि इसी भाँति उनकी रक्षा की गई तो उनकी संख्या वहाँ फिर बढ़ सकेगी।

उत्तरी कटिबंध का सफ़ेद रीछ

उत्तरी कटिबंध के संपूर्ण जन्तुओं में जो मुख्यतया सफ़ेद रीछ को प्राप्त है वह किसी अन्य जन्तु को नहीं। यद्यपि वह वायु में साँस लेता है, तो भी वह समुद्र का ही जन्तु है और हिम के सागर से अधिक दूरी पर शायद ही कभी दिखलाई दिया हो। कभी कभी वह नार्वे तथा जापान के उत्तर में भी दिखाई दिया है। वह बहुत शक्तिशाली होता है और प्रायः बर्फ़ को पार कर तैरता हुआ न्यूफ़ाउंडलेंड के तट तक आ जाता है। वह उत्तरी महासागर में पाया जाता है, इससे वह प्रायः उसके बिलकुल किनारे तक भी आ जाता है, जहाँ छोटी छोटी सील जो उसका रुचिकर भोजन है, बहुतायत से पाई जाती हैं। वह सफ़ेद ह्वेल, सामन तथा पक्षियों का भी शिकार कर लेता है। हाँ, वह दरियाई घोड़े का शिकार नहीं करता। इस्कीमो लोग इन दोनों की लड़ाइयों का रोचक वर्णन किया करते हैं। वास्तव में रीछ एक ऐसा जानवर है जो सब कुछ खा लेता है। यह बहुत भारी तथा बड़े डील-डौल का होता है और तोल में यह साढ़े पाँच मन तक का होता है और बहुत बलवान् भी होता है। इसका विशेष हथियार इसके अगले पंजे हैं। यह बड़ी सावधानी से अपने शिकार की खोज में निकलता है और भारी होने पर भी बर्फ़ की बहती हुई चट्टान पर इतना धीमे धीमे चलता है कि पैरों की आहट तक नहीं सुनाई देती। रीछ कभी कभी मनुष्यों पर भी आक्रमण करता है, तो

भी वह बहुत कायर होता है और बहुधा बन्दूक़ के शब्द से भयभीत होकर भाग जाता है। जहाँ उसका शिकार किया जाता है, उन स्थानों से वह मनुष्यों की आँख बचाकर भाग जाता है। भूखा रीछ निस्संदेह बड़ा भयानक होता है। रीछ की मादा अपने बच्चों की रक्षा करने में अपनी जान पर खेल जाती है। नर और मादा वसंत-ऋतु में एक साथ दिखाई देते हैं, किन्तु बच्चे वर्ष भर तक या उससे भी अधिक समय तक अपनी माताओं के ही साथ रहते हैं। रीछ जाड़े के दिनों में भी एक स्थान पर स्थिर नहीं रहते, किन्तु इधर-उधर बराबर फिरा करते हैं। बाढ़-बवण्डर अथवा आँधी-पानी के दिनों में वे बर्फ़ के बड़े बड़े टीलों तथा चट्टानों में आश्रय लेते हैं और मादा तो सदैव छोटे छोटे बच्चों को लिये कन्दराओं या बर्फ़ की माँदों में रहा करती है।

मास्टर मदन—तो क्या वहाँ रीछ अधिकता से हैं ?

ताऊ जी—होते तो बहुत हैं, किन्तु जब से इस्कीमो लोग तथा योरप व अमरीका के लोग जा जाकर उनका शिकार करने लगे, उनकी संख्या बहुत कम हो गई है। स्पिट्ज़बर्जन तथा पश्चिमी ग्रीनलेंड में तो अब वे रह ही न गये। उत्तरी प्रदेशों के अनेक स्थानों से सैकड़ों की संख्या में रीछ की खालें उत्तरी नार्वे में आती हैं।

सील

मास्टर मदन—सुनते हैं, सील भी अनेक प्रकार की होती हैं ?

ताऊ जी—डाक्टर नानसन ने उनकी तीन जातियाँ बतलाई हैं। बहुतों का विचार है कि दरियाई घोड़ा तथा दरियाई सिंह भी एक प्रकार के सील ही हैं। इसे तुम यों समझ लो कि स्थान के परिवर्तन के साथ साथ शारीरिक अवस्था में भी परिवर्तन होता ही है। अतएव थोड़े थोड़े परिवर्तन के कारण सील भी कई प्रकार की होगई हैं। मार्च में इनका जन्म प्रारम्भ होता है। सेंट लारेंस की खाड़ी के बर्फ़ के पानी में हज़ारों की संख्या में इनका शिकार किया जाता है। न्यूफ़ाउंडलेंड के पूर्वोत्तर में ये शिकार करके एक-एक किश्ती में दो दो हज़ार की संख्या में लाई जाती हैं। ग्रोनलेंड के समुद्र-तट पर इस्कीमो लोग अक्टूबर, नवम्बर और मई में इनका शिकार किया करते हैं।

मास्टर मदन—सील का शिकार करके क्या लोग उसका मांस भी खाते हैं।

ताऊ जी—उसका मांस तो खाते ही हैं, इसके सिवा उसकी चर्बी जलाने के काम लाते हैं, उसकी खाल वस्त्र का काम देती है। इसके अतिरिक्त और बहुत-से कामों में वह आती है।

दरियाई घोड़ा तथा दरियाई सिंह

योरप-निवासी दरियाई घोड़े से पूर्व-काल से ही परिचित हैं। इसका शरीर बड़ा होता है। इसके सिवा हाथी जैसे इसके दो दाँत भी निकले रहते हैं। इसके ये दाँत इसके ऊपर के जबड़ों में होते हैं और लगभग दो फ़ुट मुँह से बाहर निकले रहते हैं। यह इनसे बर्फ़ खोदने तथा खोलदार मछ-लियों के खोल तोड़ने का काम लेता है। पानी में यह बहुत तेज़ और फ़ुर्तीला रहता है, किन्तु स्थल में पहुँच कर यह बहुत सुस्त हो जाता है और इसकी चाल भी बहुत धीमी पड़ जाती है। समुद्र-तट पर हज़ारों की संख्या में इसके झुंड देख पड़ते हैं और शिकारियों के लिए मनोविनोद की सामग्री होते हैं। यह बहुत गहरे समुद्र का जन्तु नहीं है, किन्तु समुद्र-तट के समीप ही रहा करता है। यह प्राय: उत्तरी ध्रुव के सारे प्रदेशों में पाया जाता है। परन्तु शिकारियों के कारण इसकी भी संख्या दिन-प्रति-दिन कम होती जा रही है। ग्रीनलेंड में तो अब यह बिलकुल ही दिखाई नहीं पड़ता। हाँ, एकदम उत्तर के प्रदेशों में अवश्य पाया जाता है। दरियाई घोड़ा अपने अगले दाँतों और कड़े चमड़े के कारण बहुमूल्य समझा जाता है। सील की भाँति इसका भी मांस खाने में अच्छा होता है। इसी प्रकार का दरियाई सिंह भी होता है, जो बड़ा भयानक जानवर है। इसके भी दाँत मुँह से बाहर निकले होते हैं।

ह्वेल

ह्वेल के विषय में तो तुम जानते ही होगे। वह मछली की भाँति होती है, पर वह अपने बच्चों को दूध भी पिलाती है। वह बहुत लम्बी-चौड़ी होती है। उसका तेल जलाने के काम में आता है। उसकी चर्बी का प्रयोग साबुन बनाने में भी किया जाता है। नार्वे, हालेंड, जर्मनी और स्काटलेंड के लोग उसके शिकार के लिए ग्रीनलेंड जाया करते हैं। ह्वेल की हड्डियों का भी व्यापार होता है। ह्वेल कई प्रकार की होती है। इनमें एक सफ़ेद ह्वेल भी होती है। सफ़ेद ह्वेल सारे उत्तरी ध्रुव में पाई जाती है। यह प्रायः समुद्र-तट के समीप ही मिल जाती है। शिकारी लोग जब इसे खाड़ी में जाते हुए देख लेते हैं, बड़ी सुगमता से जाल लगाकर पकड़ लेते हैं। एक समय इस प्रकार की ह्वेल स्पिट्ज़बर्जन में दो हज़ार की संख्या में पकड़ी गई थी।

मास्टर मदन—आपने कहा था कि दरियाई घोड़े के दो दाँत हाथी की भाँति मुँह से बाहर निकले हुए होते हैं। क्या ह्वेल के भी ऐसे दाँत होते हैं ?

ताऊ जी—हाँ, एक प्रकार की ऐसी भी ह्वेल होती है जिसके दाँत मुँह से बाहर निकले होते हैं। किन्तु यह बहुधा बहुत दूर और गहरे पानी में होती है। समुद्र-तट के समीप कभी कभी दिख-लाई पड़ती है। अब यह भी दिन-प्रति-दिन कम होती जा रही

है। किसी समय इसके ये दाँत दवा के काम में लाये जाते थे। चीन में इनकी बहुत माँग रहती है। ह्वेल का तेल बहुत उपयोगी होता है और इसका भी मांस बड़े चाव से खाया जाता है।

मामथ

एक और जानवर का वृत्तान्त सुनो। यह अत्यंत विचित्र व विलक्षण होता है। इसकी आकृति हाथी के समान होती है। इसके दाँत भी हाथी के दाँत की भाँति मुँह से बाहर निकले होते हैं। इसको मामथ कहते हैं। किसी समय में ये साइबेरिया, योरप तथा उत्तरी अमरीका के उत्तर में अधिकता से पाये जाते थे, किन्तु अब इनका केवल नाम ही नाम बाक़ी है। कभी कभी बड़े बड़े खोहों में या जमी हुई बर्फ़ अथवा ज़मीन में इसके दाँत लोगों को मिल जाते हैं। न्यूसाइबेरिया के द्वीपों में इसके दाँत अधिकतर मिलते रहे हैं। गर्मी के दिनों में लोग इनकी खोज में निकलते हैं। ये दाँत बहुत रद्दी और बुरी दशा में मिलते हैं। फिर भी ये सब एकत्र कर लिये जाते हैं और चीन तथा रूस को भेजे जाते हैं, जहाँ इनकी कंघियाँ, पाइप और प्याले बनाये जाते हैं। कहा जाता है कि सन् १९१३ में मामथ के ऐसे दाँत लगभग साढ़े पाँच सौ मन न्यूसाइबेरियन द्वीपों से लाये गये थे।

तीसरा अध्याय

उत्तरी ध्रुव के पक्षी

मास्टर मदन—अच्छा क्या उत्तरी ध्रुव की ओर पक्षी भी होते हैं ?

ताऊ जी—हाँ ! हाँ ! उत्तरी ध्रुव-प्रदेशों में हज़ारों प्रकार के पक्षी होते हैं। वे कितने प्रकार के होते हैं, इन सबका सम्पूर्ण वर्णन करना, यहाँ तक कि उनमें कुछ प्रकार के ही पक्षियों का भी वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। स्थल के पक्षी तो अधिक नहीं होते हैं, केवल थोड़े प्रकारों के ही पक्षी उत्तरी स्थल-प्रदेशों में पाये जाते हैं। परन्तु जो पक्षी वहाँ बहुतायत से पाया जाता है उसको टारमीगन (Ptarmigan) कहते हैं।

बर्फ़ का उल्लू

वहाँ उल्लू पक्षी भी अधिक पाये जाते हैं।

मास्टर मदन—क्या इसी प्रकार के उल्लू जैसे कभी कभी हमारे बाग़ों में दिखाई देते हैं ?

ताऊ जी—होते तो लगभग इसी प्रकार के हैं, किन्तु उनको बर्फ़ का उल्लू कहते हैं।

मास्टर मदन—ये उल्लू वहाँ खाते क्या हैं ?

ताऊ जी—ख़रगोश (खरहा) के ऐसे छोटे-छोटे जानवर जो बहुधा भूमि खोदकर रहते हैं, बर्फ़ का उल्लू उनका शिकार करता और उन्हीं के मांस पर निर्वाह करता है।

इसके अतिरिक्त उत्तरी ध्रुव-प्रदेशों में वे पक्षी भी होते हैं जो एक विशेष ऋतु या समय तक ही वहाँ रहते हैं। बाद को वे अपने अपने स्थानों को चले जाते हैं। वहाँ मधुर बोली बोलनेवाले पक्षी भी एक विशेष संख्या में पाये जाते हैं। उनके साथ और भी छोटे बड़े रंग-बिरंगे पक्षी होते हैं। उनमें से कुछ के नाम ये हैं—

सैन्ड पाइपर, नाटर्टन स्टोन, सैंडरलिंग, रेडपूल इत्यादि इत्यादि। इनके अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार के जलीय पक्षी भी होते हैं, जो बहते हुए बर्फ़ के टीलों पर और समुद्र-तट के समीप अपने घोंसले बनाते हैं। पर उत्तरी ध्रुव के निकट और भी अनेक प्रकार के पक्षी होते हैं, जिनको लोमस, पफ़नेस, गुलकाइट वैक्स इत्यादि कहते हैं। इन्हीं में राजहंस और बत्तकें भी हैं। बत्तकों का शिकार भी किया जाता है। उनके अण्डे स्पिट्ज़बर्जन तथा ग्रीनलेंड में अधिक मात्रा में एकत्र करके बेचे जाते हैं।

मछलियाँ

अच्छा अब मछलियों का वर्णन सुनो। इस्कीमो लोग मछलियों के बड़े प्रेमी होते हैं। ये लोग जिन मछलियों को अधिक पसन्द करते हैं उनके नाम काड, हैलीबट तथा कीपलेन

हैं। ये समुद्र की मछलियाँ हैं और सामन मछली सोतों तथा नदियों में पाई जाती है। ध्रुव-प्रदेश की शार्क अथवा ग्रीनलेंड की शार्क ६ फ़ुट से लेकर १८ फ़ुट तक होती है; किन्तु यह शार्क मनुष्यों पर आक्रमण नहीं करती। यह बहुत धीरे धीरे तैरती है, इसका तेल भी निकाला जाता है। एक प्रकार की सामन मछली स्पिट्ज़बर्जन, ग्रीनलेंड तथा अन्य द्वीपों, उत्तरी ध्रुव के सोतों और नदियों में पाई जाती है। परन्तु इसको वहीं के निवासी शिकार करके खा जाते हैं। यह इस भाँति अधिकता से नहीं होती कि इससे किसी प्रकार का व्यापारिक लाभ उठाया जा सके।

छोटे छोटे जीवधारी

उत्तरी कटिबंध में वास्तव में लगभग सभी प्रकार के जन्तु पाये जाते हैं। वहाँ छोटी छोटी तितलियाँ भी बहुत पाई जाती हैं। इनको देखकर ऐसा जान पड़ता है कि रंग-बिरंग के काग़ज़ के टुकड़े इधर-उधर वायुमण्डल में उड़ रहे हैं। छोटी बड़ी मक्खियाँ, भाँति-भाँति की मकड़ियाँ तथा छोटे छोटे कीड़े भी वहाँ पाये जाते हैं। तात्पर्य यह कि वहाँ सभी प्रकार के जन्तु पाये जाते हैं। छोटे छोटे कीड़े-मकोड़ों में कुटकी और मच्छर भी होते हैं। ये उत्तरी प्रदेशों में अधिकता से पाये जाते हैं। मच्छर रेनडियर तथा मनुष्यों को बहुत काटते हैं। पश्चिमी ग्रीनलेंड के कुछ स्थानों पर उनकी अधिकता तो असहनीय हो जाती है। कुशल यही है कि

इन मच्छरों में किसी प्रकार का विष नहीं होता। इनका काटना निस्सन्देह दुखदायी होता है, किन्तु इनसे किसी प्रकार की बीमारी नहीं फैलती।

इस्कीमो

मास्टर मदन—तो क्या उत्तरी ध्रुव में मनुष्यों की आबादी बिलकुल नहीं है।

ताऊ जी—उत्तरी कटिबन्ध के प्रदेशों में जो लोग निवास करते हैं उनको इस्कीमो कहते हैं। ये लोग उत्तरी अमेरिका में, ग्रीनलेंड तथा लेबराडोर (Labrador) के पश्चिमी समुद्र-तट पर रहते हैं। कुछ इस्कीमो ग्रीनलेंड के पूर्व में भी निवास करते हैं। इस्कीमो लोगों की जन-संख्या ३२ हज़ार से अधिक नहीं अनुमान की जाती। इनमें से १४,५०० ग्रीनलेंड में बसते हैं। साइबेरिया में १,६०० और लेबराडोर में १,००० इनकी आबादी बताई जाती है।

भोजन

एशिया तथा योरप के उत्तरी प्रदेशों में इस्कीमो लोग बिलकुल नहीं हैं। उनका भोजन मांस है, जिसे वे शिकार के द्वारा प्राप्त करते हैं। धातु और लकड़ी के न होने से वे हड्डियों के हथियार बनाते हैं और चमड़े को नसों से सीकर नावों पर मढ़ते हैं। इन्हीं नावों पर बैठकर वे शिकार खेलते हैं। शिकार का जो मांस खाने से बच जाता है उसको वे बर्फ़ में दबा रखते हैं और जाड़े के मौसम में निकाल कर खाते हैं। ये लोग एक

समय में दो दो सेर तक कच्चा मांस खा जाते हैं। कच्चा मांस खाने के कारण ही ये इस्कीमो कहलाते हैं। इस्कीमो शब्द का अर्थ ही कच्चा मांस खानेवाला है। रेनडियर और ध्रुव के नील गाय का मांस ये अधिक चाव से खाते हैं।

वस्त्र

उत्तरी प्रदेशों में भला सूत और रेशम कहाँ ? इस कारण इस्कीमो लोग जानवरों के चमड़े और पक्षियों के पंखों को सीकर उनसे अपने पहनने के लिए वस्त्र बनाते हैं। सीने के लिए वे रेनडियर की हड्डियों की सुइयाँ और उसके मांस के पुट्ठों में से तार निकाल कर डोरे बनाते हैं। स्त्रियों तथा पुरुषों का वस्त्र लगभग एक ही समान होता है। स्त्रियों के वस्त्र में यह विशेषता होती है कि वे सिर और गर्दन पर एक प्रकार का थैला-सा सीकर पहन लेती हैं। इन थैलों में वे अपने बच्चों को रख लेती हैं। इस्कीमो स्त्री-पुरुष दोनों पायजामा पहनते हैं। स्त्रियों तथा बालकों के पायजामे में सजावट के लिए कहीं कहीं पक्षियों के पंख लगा दिये जाते हैं।

रहन-सहन

रेनडियर और ध्रुव के नील गायों इत्यादि के अतिरिक्त वसन्त-ऋतु में बत्तकों और राजहंसों के शिकार की भी सुविधा समुद्र-तट पर अधिक रहती है। इससे ये लोग प्राय: अपना निवासस्थान समुद्र-तट पर ही रखते हैं। गर्मी के दिनों में तो ये लोग तंबू बना कर रहते हैं, किन्तु जाड़े के दिनों में ये बर्फ़

की छोटी छोटी गुफाओं में रहते हैं। ये अपने रहने के लिए गुफायें खोद लेते हैं। जो बहुत छोटी होती हैं। न उनमें खड़े होने के लिए पूरा स्थान होता है, न लेटने का। ये गुफायें चारों ओर से बर्फ़ की बड़ी बड़ी सिलों-द्वारा बन्द रहती हैं। उनमें आने-जाने का मार्ग एक बिल के समान होता है। जाड़े के दिनों में ये लोग इन्हीं घरों में रहते हैं। हाँ, अब उनके बालकों का हाल सुनो।

इस्कीमो बालक

उत्तरी कटिबंध में चारों ओर बर्फ़ ही बर्फ़ होती है। इस कारण वहाँ की ठण्डक का क्या कहना। यही कारण है कि वहाँ स्नान इत्यादि की कोई चर्चा ही नहीं करता। छोटे बालकों को तो कभी स्नान ही नहीं कराया जाता। बालकों के रखने के लिए एक घोंसला-सा स्थान बना दिया जाता है। इस घोंसले में पक्षियों के पंख बिछा दिये जाते हैं। इस्कीमो बालकों की माता जब बच्चे को उस घोंसले से बाहर निकालती है तब बिल्ली के समान पहले उनको अपनी जिह्वा-द्वारा चाटती है, जिससे उनके शरीर की दुर्गन्धि तथा मल साफ़ हो जाय। इसके पश्चात् दूध पिलाकर बड़ी सावधानी से फिर उसी घोंसले में रख देती है। यह तो बच्चों का हाल हुआ। अब लड़कों का हाल सुनो। इस्कीमो लड़के बहुत निडर होते हैं, कुत्तों से तो वे खेला ही करते हैं। सफ़ेद रीछ (जो उत्तरी कटिबंध में अधिकता से होते हैं और जिनका वर्णन तुमसे

किया जा चुका है) भी इस्कीमो लड़कों का बड़ा मित्र होता है। उनके लड़के उन रीछों से उसी भाँति निडर होकर खेलते हैं, जिस भाँति तुम लोग कुत्ते-बिल्लियों के साथ खेलते हो। इस्कीमो लोगों का रंग भूरा होता है और जब उनका चेहरा साफ़ होता है, तब उस पर कुछ लाली की भी झलक दिखाई पड़ती है।

उजाले की सामग्री

तुम यहाँ बड़े बड़े लैम्पों और बिजली के उजाले से अपने घरों में उजाला और प्रकाश करते हो। अब इस्कीमो लोगों की कथा सुनो। उन बेचारों को दियासलाई का बक्स कहाँ मिलता है। वे तो अब भी पुराने लोगों की भाँति लकड़ी के टुकड़े को एक दूसरे से रगड़कर उससे आग पैदा करते हैं। फिर उसी आग से अपने दिये जलाते हैं। उनके दिया पत्थर की लम्बी लम्बी थालियाँ होतीं हैं और तेल का काम सील की चर्बी से लेते हैं और बत्ती के स्थान पर सिवार या काई रख देते हैं।

इस्कीमो लोगों की स्लेज अर्थात् कुत्तों की गाड़ी

तुमने टाँगा, फिटन, मोटर तथा रेलगाड़ी जैसी सवारियाँ देखी हैं। संभव है, वायुयान भी उड़ते हुए देखे हों। किन्तु अब इस्कीमो लोगों की गाड़ियों का हाल सुनो। उनकी गाड़ियों में घोड़े इत्यादि के बदले कुत्ते जोते जाते हैं। इन गाड़ियों को स्लेज कहते हैं। जो कुत्ते इनको खींचते हैं उनके पैरों पर सील के चमड़े का खोल चढ़ा रहता है। इस खोल में छेद होते हैं, जिससे कुत्तों के पंजे

उनसे बाहर निकले रहते हैं। इन कुत्तों को हाँकने के लिए बड़े बड़े कोड़े होते हैं। ये कोड़े भी चमड़े के बने होते हैं। इनसे बहुत ही चोट लगती है। इस्कीमो लोगों के कुत्ते बड़े लाभदायक होते हैं। वे बड़ी ख़ूबी से इन गाड़ियों को खींचते हैं। ये कुत्ते बलवान् तथा भयानक होते हैं। जिस समय ये भूखे होते हैं उस समय और भी अधिक भयानक हो जाते हैं, उस समय जो कोई भी इनको मिल जाता है उसे चबा डालते हैं। लोमड़ी तथा ख़रगोश इत्यादि को तो ये कुछ समझते ही नहीं। बहुधा ये एक-दूसरे को भी मार कर खा जाते हैं।

इस्कीमो लोगों की सभ्यता

उत्तरी कटिबंध की पैदावार, वहाँ का जाड़ा, वहाँ के बर्फ़-से उजाड़ स्थानों से तुम यह अनुमान कर सकते हो कि इस्कीमो लोगों की सभ्यता व समाज का क्या हाल होगा। उजड्ड और जंगली मनुष्य में न कोई सभ्यता होती है, न शिक्षा, अतएव उनमें अंधविश्वास भी अधिकता से होता है। स्कीमो लोगों का भी यही हाल है। वे जब रीछ का शिकार करते हैं तब उसके होंठ काटकर इसलिए रख छोड़ते हैं कि जब किसी दूसरे रीछ के शिकार का समय आवेगा तब वह उन्हें काट न सकेगा। दरियाई घोड़ा अथवा दरियाई सिंह के दाँत भी इस कारण निकाल लेते हैं कि फिर कोई दूसरा दरियाई घोड़ा अथवा दरियाई सिंह उन पर आक्रमण न कर सकेगा। इन शिकार किये हुए भयानक जानवरों की आत्मा को वे पानी भी

फा० ५

चढ़ाते हैं, जिससे उनकी आत्मा उन पर दयालु रहे। किन्तु जब से योरपीयों का उनसे संसर्ग हुआ है, वे कुछ समझदार होते जा रहे हैं। उनको योरपीयोंने बंदूकें भी लाकर दीं, चाकू, चाय तथा दियासलाइयों का प्रयोग भी बताया। एक ओर जहाँ ये सब बातें हुईं, दूसरी ओर यह भी हुआ कि इस्कीमो लोग अपना पुराने ढंग का युद्ध तथा शिकार-प्रणाली भूलने लगे। परन्तु पिछले महायुद्ध के समय पर जब योरपीय सामग्री ग्रीनलेंड में कम होने लगी और उत्तरी कटिबंध में कोई जहाज़ न पहुँचा तब इस्कीमो लोग फिर अपनी पुरानी प्रथा ग्रहण करने को मजबूर हुए।

योरपवाले प्राय: व्यापार के लिए उत्तरी कटिबंध में जाया करते हैं और इस भाँति वहाँ व्यापार तथा कारबार भी प्रारम्भ हो गये हैं। व्यापार के विस्तार का यह परिणाम हुआ है कि इस्कीमो लोग योरपीयों की सभ्यता तथा सामाजिक नियमों की नक़ल करने लगे और इस प्रकार इस्कीमो लोगों की असली सभ्यता दिन-प्रति-दिन नष्ट होने लगी है। उनकी दंतकथायें तथा उनकी भाषा ही केवल जीवित हैं, किन्तु बहुत-से इस्कीमो लोगों ने अब योरपीयों का धर्म्म तक नाम-मात्र के लिए स्वीकार कर लिया है।

ध्रुवों का प्रकाश

उत्तरी कटिबंध के आकाशमंडल पर एक बहुत ही विचित्र व विलक्षण प्राकृतिक दृश्य दिखलाई देता है। उसे 'उत्तरी

ज्योति' अथवा 'उत्तरी प्रकाश' कहते हैं। वह नीचे के अक्षांश तक में जहाँ नार्वे तथा स्काटलेंड इत्यादि स्थित हैं, मनुष्यों को दिखाई देता है। वह कभी कभी उससे भी अधिक नीचे दक्षिण में जैसे मेड मेटरनियन इत्यादि के निकट भी दिखलाई देता है। किन्तु उत्तरी कटिबंध की अँधेरी रातों में वह बहुत अधिक खुला हुआ और स्पष्ट देख पड़ता है। इसी प्रकार का प्रकाश दक्षिणी ध्रुव के समीप भी दृष्टिगोचर होता है। किन्तु यहाँ इसका प्रकाश उत्तरी ध्रुव के प्रकाश की अपेक्षा मध्यम होता है। मतलब यह कि शीतकटिबंध के निवासियों के लिए यह एक दैवी प्रसाद है कि छः छः महीने की लगातार की रातों में उसने उनके लिए इस प्रकार प्रकाश की सामग्री प्रदान कर दी है। यह पहले उत्तरी ध्रुव की ओर दिखाई दिया था। उस समय यह विचार किया गया कि यह केवल उत्तरी कटि-बंध में ही प्रकट होता है, इसलिए उसका नाम 'अरोरा-बोरा-लेस' (Aurora Borealis) अर्थात् 'उत्तरी ज्योति' अथवा 'उत्तरी प्रकाश' रक्खा गया। परन्तु जब इसी प्रकार का प्रकाश दक्षिणी कटिबंध में भी देखा गया तब फिर उस प्रकाश को 'अरोरा पोलारिस' (Aurora Polaris) अर्थात् 'ध्रुवी ज्योति' या 'ध्रुवों का प्रकाश' कहने लगे। ध्रुवों का यह प्रकाश भिन्न भिन्न रूपों में प्रकट होता है। कभी कभी तो यह एक विस्तृत हलका प्रकाश-सा प्रतीत होता है—इस प्रकार का हलका कि यदि चन्द्रमा का प्रकाश हो तो उसका देखना कठिन हो जाता

है। परन्तु साधारण तौर से यह एक सुनहरे फ़ीते तथा बिखरी हुई प्रतिबिम्बित रेखाओं के समान प्रकट होता है और एक प्रकाशित व प्रकट रूप से धनुषाकार आकृति ग्रहण कर लेता है, जिसके दोनों सिरे क्षितिज से मिले हुए रहते हैं। कभी कभी यह सुनहरा फ़ीता अथवा प्रतिबिम्बित रेखा फैलते फैलते कामदानी के प्रकाशित तथा चलायमान पर्दे की भाँति होता है और एकदम 'सर्च-लाइट' के समान आकाश के दूसरे सिरे पर पहुँच जाता है। चाहे यह कोई रूप धारण करे, किन्तु प्राय: इसमें तत्क्षण हिलना-डोलना तथा तात्कालिक, परिवर्तन होते रहते हैं। प्रकाश तो एकदम स्वच्छ तथा साफ़ होता है। परन्तु इसके हाशिये और किनारे कभी पीले लाल कभी आसमानी बैंगनी और कभी कभी हरे रंग के होते हैं। प्रकाश की न्यूनता तथा अधिकता के विषय में मनुष्यों का मतभेद है। ग्रीनलेंड में जहाँ यह साधारण तौर से प्रकट होता रहता है, वहाँ तो कभी कभी यह प्रकाश चन्द्रमा से भी अधिक तेज़ होता है। यहाँ तक की परछाई तक पड़ने लगती है। परन्तु साधारण तौर से यह प्रकाश चन्द्रमा से चतुर्थांश कम ही होता है, बल्कि जब पूरा चाँद होता है तब यह प्रकाश में एक-दम गुम हो जाता है। अन्तरीप सागर में एवन्स अन्तरीप पर प्रकाश भी ध्रुव के प्रकाश को मंद करके लुप्त कर देता है। अडयर के अन्तरीप पर यह अधिक प्रकाशपूर्ण और अधिक रंगीन प्रतीत होता है।

मास्टर मदन—परन्तु यह प्रकाश कैसे होता है ?

ध्रुवों के प्रकाश का कारण

ताऊ जी—ध्रुवों के इस प्रकाश की भिन्न अवस्थायें भिन्न समयों में बताई गई हैं, परन्तु साधारण तौर से अब यह माना जाता है कि सूर्य्य की गति की प्रचण्ड लहरों का दबाव वायु-मंडल पर होता है और इस रगड़ से विद्युत् का प्रकाश उत्पन्न होता है। यहाँ का यह प्रकाश उसी का प्रकाश होता है। वैज्ञानिकों ने इस बात का अनुभव किया है कि जिस समय बिजली का यह प्रकाश प्रकट होता है तब कुतुबनुमा की सुई एक-दम शिथिल पड़ जाती है। नार्वे में तो इस प्रकाश के प्रभाव से टेलीग्राफ़ के तारों का विद्युत्-प्रभाव भी नष्ट हो गया था। विक्टोरिया-लैंड (Victoria-land) में भी इसी प्रकार की घटनायें हुई थीं।

मास्टर मदन—यदि यह प्रकाश बिजली के कारण है तो वैज्ञानिक इसको भी उत्पन्न कर सकते होंगे।

ताऊ जी—हाँ, कहा जाता है कि एक महान् वैज्ञानिक ने दो पर्वत-श्रेणियों के समीप इस प्रकार का विद्युत्-चमत्कार उत्पन्न कर लिया और यह सिद्ध कर दिया कि ध्रुव के प्रकाश का कारण वह बिजली है जो वायुमंडल के झोकों तथा स्पर्श-द्वारा उत्पन्न होती है।

मास्टर मदन—अच्छा ! यदि यह बिजली है तो इसमें गर्जन तथा शब्द भी होता होगा।

ताऊ जी—लोग कहते तो यही हैं कि जिस समय ध्रुव की उक्त ज्योति प्रकट होती है तब उसके साथ शब्द भी होता है। परन्तु शब्द का होना ठीक ढंग से नहीं समझा गया, क्योंकि कभी शब्द होता है और कभी नहीं जान पड़ता। इस कारण शब्द के संबंध में निश्चय रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

मास्टर मदन—लेकिन शब्द यदि कभी होता है और कभी नहीं होता तो इसका भी कोई न कोई कारण अवश्य होगा।

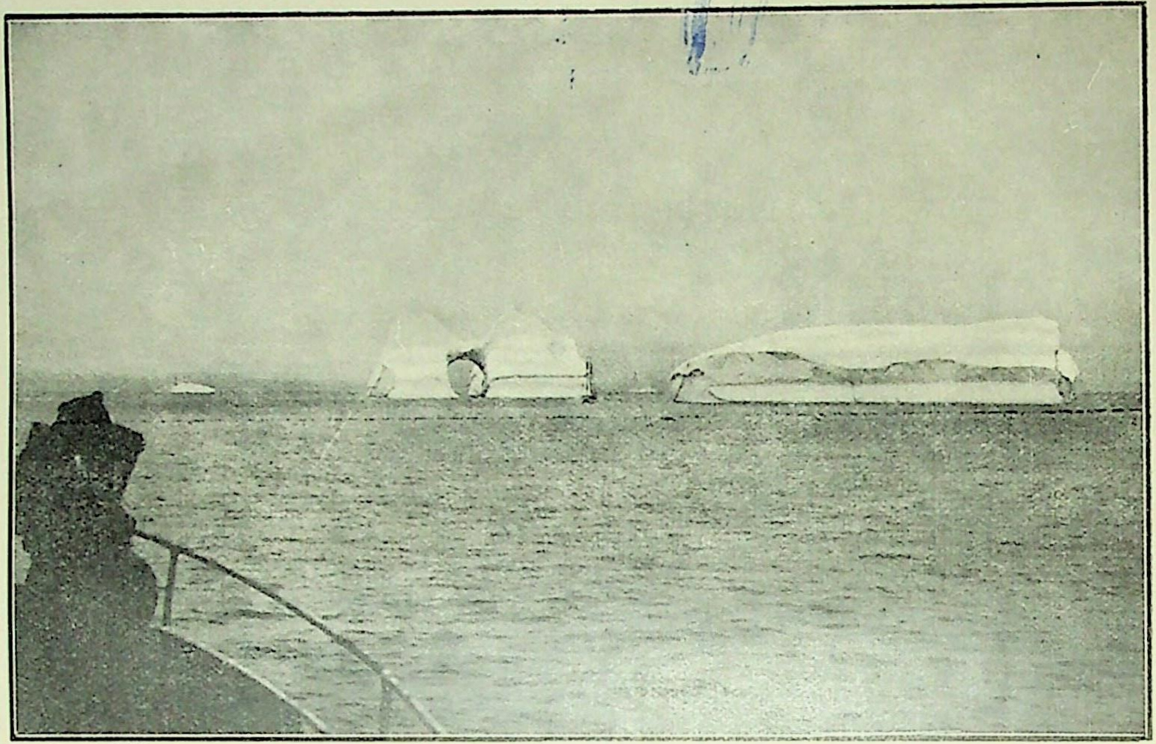
ताऊ जी—इसका यह कारण बताया जाता है कि ध्रुवों का प्रकाश साधारण तौर से पृथ्वी से ६५ मील की दूरी पर हुआ करता है। सबसे कम दूरी पर जो प्रकाश दिखाई पड़ता है वह भी ५० मील की दूरी से कम नहीं होता। इस कारण जो शब्द सुनाई देता है वह या तो असाधारण तीव्र होता होगा अथवा वायु की दिशा के अनुसार होता होगा। फिर ६५ मील की दूरी इतनी अधिक है कि ध्रुवों को ज्योति का शब्द सुगमता से नहीं सुनाई दे सकता। यही कारण है कि शब्द कभी सुनाई देता है और कभी बिलकुल नहीं सुनाई देता।

चौथा अध्याय

डाक्टर नानसन तथा कप्तान पेरी की यात्राओं का वर्णन

उत्तरी ध्रुव की खोज करनेवालों का इतिहास संक्षेप में तुमको सुना दिया गया। ये लोग इँग्लिस्तान, इटली, नार्वे, डेन्मार्क तथा अमरीका आदि सभ्य देशों से गये थे तथा इन सब लोगों ने उत्तरी ध्रुव के संबंध में मनुष्य के ज्ञान की न्यूनाधिक वृद्धि भी की। इन लोगों में से डाक्टर नानसन जो नार्वे के निवासी थे और जिनका वर्णन भी किया जा चुका है, यद्यपि ठीक उत्तरी ध्रुव तक नहीं जा सके, फिर भी उनके द्वारा ऐसी बातें जो ध्रुव-यात्रा के लिए लाभदायक हैं, मनुष्यों को भली भाँति ज्ञात हो गईं। जैसे कि उत्तरी ध्रुव के यात्री को किस प्रकार की पोशाक पहननी चाहिए, यात्रा में किन किन वस्तुओं की आवश्यकता होती है तथा किन किन विशेष बातों के लिए सावधान रहने की आवश्यकता है। इन्हीं के अनुभव से यह भी ज्ञात हुआ कि जहाज़ ऐसा बनाया जाय जो यदि ध्रुवों की लहरों के बहाव पर छोड़ दिया जाय तो वह बराबर ध्रुवों की ओर बहता चला जाय। इन्होंने ध्रुवों की हवाओं के वेग तथा समुद्र की लहरों का भी अनुभव किया था, इसी कारण

इनका विचार था कि यदि जहाज़ उत्तरी साइबेरिया से ग्रीनलैंड की ओर बहती हुई लहरों में छोड़ दिया जाय तो वह उत्तरी ध्रुव के समीप अवश्य पहुँच जायगा और यदि वह किसी प्रकार बर्फ़ की चट्टानों में फँस भी जायगा तो भी वह उसी लहर में बहता हुआ चला जायगा। इन्होंने फ़ार्म नामक एक जहाज़ बनवाया था, जिसमें १२ मनुष्यों के लिए काफ़ी भोजन-सामग्री आदि रख कर २४ जून सन् १८९३ को ये अपनी यात्रा में चले थे। योरप के धुर उत्तर से आगे बढ़ने पर इन्हें प्रत्येक ओर बर्फ़ की चट्टानें दिखाई देने लगीं। अकस्मात् २५ सितम्बर को इनका जहाज़ एक बर्फ़ की चट्टान में फँस गया। यह बर्फ़ की चट्टान जो समुद्र की लहरों के वेग में बहती जा रही थी, अपने साथ साथ इनके जहाज़ को भी बहा ले चली। अब जहाज़वालों को कोई काम न था। ये जहाज़ पर भोजन करते, विश्राम करते और पारस्परिक मनोविनोद के अतिरिक्त इनके लिए अन्य कोई दूसरा काम न था। दो वर्ष का समय इसी दशा में बीत गया। बड़ा दिन तथा जन्मोत्सव का सहभोज भी हँसी-ख़ुशी के साथ मनाया गया और मार्ग के मनोरंजक दृश्यों व घटनाओं का आनन्द उठाया गया। इसी सिलसिले में इन्होंने एक दिन उत्तरी ज्योति (Aurora-Borealis) का भी दृश्य देखा। उत्तरी ज्योति का आशय उसी प्रकाश से है जिसका वर्णन ध्रुवों के प्रकाश के सिलसिले में पहले किया जा चुका है। हाँ, तो वे क्या देखते हैं कि



बर्फ़ के टीले

आकाशमंडल पर क्षितिज के एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक प्रकाशवान् चादर-सी फैल गई है और उसमें अत्यन्त प्रकाशवान और चमकीली धारियाँ रह रह कर प्रकट हो रही हैं, कभी बैंगनी हरी, कभी बैंगनी और कभी लाल और कभी सुनहरे रंग में बदल बदल कर वे नभमण्डल पर लहरा रही हैं। जहाज़ पर जो मनुष्य थे वे इस अद्भुत दृश्य को देखकर चकित हो गये। धीरे धीरे ये लहरें धीमी पड़कर अदृश्य हो गईं। उस समय से लोगों का यह विचार हुआ कि यह प्रकाश केवल उत्तरी कटिबंध में ही प्रकट होता है, इसी लिए इसका नाम उत्तरी ज्योति (Aurora Borealis) रक्खा गया। परन्तु इसके पीछे यह पता लगा कि इसी प्रकार का प्रकाश दक्षिणी ध्रुव में भी दिखाई देता है, इसलिए अब इसको ध्रुवों का प्रकाश कहने लगे।

फलतः बर्फ़ की चट्टान के साथ बहते बहते जनवरी १८९५ ई० को डाक्टर नानसन का जहाज़ ८३° अक्षांश तक पहुँच गया। अब उन्होंने यह विचार किया कि यदि जहाज़ की यही चाल रही तो बहुत समय व्यर्थ नष्ट हो जायगा, इस कारण २६ फ़रवरी सन् १८९५ ई० को उन्होंने अपना एक साथी, दो बर्फ़ानी गाड़ियाँ, कुछ भोजन-सामग्री और कुत्ते अपने साथ लिये और जहाज़ को छोड़कर ध्रुव की ओर चले। परन्तु अकस्मात् उनको दो बार वापस आना पड़ा। इसलिए उनकी वास्तविक यात्रा १४ मार्च १८९५ ई० से प्रारम्भ हुई। किन्तु अब भी उनकी गति कुछ अधिक तीव्र न हो सकी, क्योंकि

बर्फ़ बहुत कड़ी थी और उस पर गाड़ियों का खींचना बहुत कठिन हो रहा था। तीन सप्ताह के समय में वे केवल दो सौ मील की यात्रा कर सके। नानसन २० मील आगे थे, इस प्रकार वे ६८°/ अक्षांश तक पहुँच गये। इसके पश्चात् वे वापस हुए। वे दक्षिण की ओर घूमते-फिरते चले आ रहे थे कि सौभाग्य से उनको एक अँगरेज़ी जहाज़ मिल गया। वे उस पर बैठ कर १३ अगस्त १८९६ ई० को अपने देश के समीप वार्डू (Vardu) पहुँच गये। संयोग से उसी दिन उनका जहाज़ फ़्राम (Fram) भी जो वर्फ़ की चट्टान में फँसा हुआ था, छूट गया और वह भी वार्डू वापस आ गया।

मास्टर मदन—क्या नानसन उत्तरी ध्रुव तक पहुँचे नहीं ?

ताऊ जी—नहीं, नानसन उत्तरी ध्रुव तक नहीं पहुँच सके, किन्तु वे उत्तरी ध्रुव की ६८° तक पहुँच गये थे, जहाँ उस समय तक कोई यात्री नहीं पहुँचा था। इसके अतिरिक्त उनकी यात्रा की एक यह भी विशेषता है कि उनकी सावधानी व दूरदर्शिता के कारण उनके साथियों में से मरना तो एक ओर रहा, कोई बीमार तक नहीं होने पाया।

मास्टर मदन—किन्तु आपने अभी कहा था कि पेरी (Peary) नामक कोई मनुष्य उत्तरी ध्रुव तक पहुँचा था।

ताऊ जी—हाँ, सुनते जाओ। मैं उनके पहुँचने का वर्णन भी तुमसे करता हूँ।

उत्तरी ध्रुव पर पेरी के पहुँचने का वर्णन

पेरी अमरीकानिवासी था। उसने सबसे प्रथम तो ग्रीनलेंड के उत्तरी तथा उत्तरी-पूर्वी समुद्र-तटों को खोज की। उसके पीछे वह उत्तरी ध्रुव पर पहुँचने की चिंता में निमग्न हुआ। एक बार जब वह यात्रा कर रहा था, उसके दोनों पाँव एक तख़्ते के नीचे दब गये और इस प्रकार उसका एक पाँव टूट गया। ६ वर्ष पश्चात् एक दूसरी घटना यह हुई कि उसकी छः उँगलियाँ बर्फ़ में दबकर नष्ट हो गई। इस प्रकार वह २० वर्ष तक ग्रीनलेंड के द्वीपों तथा पहाड़ों के जमे हुए भागों की यात्रा करके अमरीका वापस आ गया। वहाँ पहुँच कर उसने एक पुराने जहाज़ रूज़वेल्ट (Roosevelt) को फिर से तैयार कराया। इस जहाज़ का नाम अमरीका के उस समय के प्रेसीडेंट रूज़वेल्ट के नाम पर रक्खा गया था। अब वह ६ जुलाई १६०८ ई० को न्यूयार्क से उत्तरी ध्रुव की यात्रा के लिए चला। ग्रीनलेंड के उत्तरी भाग के एक क़स्बे में पहुँच कर उसने १२२ इस्कीमो पुरुष, १७ इस्कीमो स्त्रियाँ, १० उनके बच्चे और ३३६ कुत्ते अपने साथ लिये और ५ दिसम्बर को शेरिडन-अन्तरीप (Cape Sheridan) पर पहुँच गया। आगे बढ़कर जब वह कोलम्बिया-अन्तरीप पर पहुँचा तब उन लोगों ने फिर से तैयारी की और १७ इस्कीमो, ६ मनुष्य, १६ बर्फ़ानी गाड़ियाँ और १२३ कुत्ते अपने साथ लेकर आगे का रास्ता लिया। कुछ दूर आगे चले जाने के पश्चात् इस विचार

से कि संसार को इन घटनाओं से सूचित करें तथा इस कारण से भी कि भोजन-सामग्री में भी बचत हो जाय, कुछ साथी लौट आये। इस दल ने पेरी का साथ उस स्थान से छोड़ा जहाँ से उत्तरी ध्रुव की दूरी केवल १५० मील रह गई थी। अब पेरी ने अपने साथियों में से हेन्सन नामक (Hensan) एक मनुष्य को अपने साथ लिया। चार इस्कीमो मनुष्य और कुछ कुत्ते भी साथ थे। ये सबके सब दो ढाई मील प्रतिघंटा की चाल से उत्तरी ध्रुव की ओर चले।

चलते चलते अंत में ६ अप्रेल १९०९ ई० को यंत्रों-द्वारा पेरी को ज्ञात हुआ कि वे लोग ध्रुव पर पहुँच गये हैं। ध्रुव पर पहुँच कर पेरी ३० घंटे तक लगातार चारों ओर घूम घूमकर यह निश्चय करता रहा कि वास्तव में उत्तरी ध्रुव के चारों ओर दक्षिण ही दक्षिण है या नहीं। यहाँ उसने बहुत-से फ़ोटो (चित्र) लिये और चारों ओर देखा-भाला, किन्तु उसको स्थल का कोई भाग वहाँ नहीं दिखलाई दिया। उसने एक स्थान पर बर्फ़ की तह खोद कर समुद्र की गहराई नापनी चाही, परन्तु उसे ९,००० फ़ुट से भी अधिक गहराई जान पड़ी। इससे उसने यह अनुमान किया कि उत्तरी ध्रुव का असली स्थान वह है जहाँ समुद्र के धरातल पर बर्फ़ की बड़ी मोटी तह जमी हुई है और चारों ओर बर्फ़ की बड़ी बड़ी चट्टानें सम्पूर्ण दृश्य को भयानक बनाये हुए हैं। वहाँ से १८ दिन पैदल यात्रा करके वह अपने जहाज़ के पास लौट

आया, किन्तु दो मास तक वह वहाँ से वापसी यात्रा न कर सका। उसका जहाज़ बर्फ़ की एक चट्टान में फँसा हुआ था। ईश्वर ईश्वर करके जहाज़ ने किसी प्रकार चट्टान से छुटकारा पाया और पेरी अपने देश को लौट आया। लौट आने पर देशवासियों ने उसको प्रेमोपहार तथा पुरस्कार से मालामाल कर दिया।

मास्टर मदन—तो क्या पेरी अभी तक जीवित है ?

ताऊ जी—नहीं, उसको मरे हुए ८-९ वर्ष हो गये। मृत्यु के पश्चात् उसका एक विशाल स्मारक स्थापित किया गया, जिस पर एक शिलालेख भी लगाया गया।

मास्टर मदन—पेरी बड़ा बहादुर मनुष्य था कि ऐसे भयानक स्थान की यात्रा की। परन्तु उसको तो पुरस्कार के प्रलोभन की आशा पहले से ही रही होगी।

ताऊ जी—तुम्हारे इस विचार का उत्तर पेरी के ही कुछ शब्दों में तुम्हें सुनाता हूँ, जो उसने अपने एक व्याख्यान में कहे थे। उसने कहा था—"एक यात्री तथा निरीक्षक कभी रुपये-पैसे के प्रलोभन से अपना काम नहीं करता। वह केवल इस कारण काम करता है कि वह उसका उद्देश होता है और उसके जीवन-लक्ष्य का एक विशेष अंग होता है। उसकी पूर्ति इसलिए आवश्यक है कि उसे पूरा होना चाहिए।"

मैं यह कह चुका हूँ कि अनेक मनुष्यों ने वायुयानों-द्वारा भी उत्तरी ध्रुव की यात्रा की है। उन्हीं में से एल० बर्ड (L. Byrd)

नाम के एक व्यक्ति ने उत्तरी ध्रुव की यात्रा से लौट कर पेरी के वर्णन का अक्षर अक्षर समर्थन किया है। उसका भो कहना है कि ध्रुव के समीप कोई देश नहीं है और यह कि ध्रुव में दिशाओं का प्रबन्ध छिन्न-भिन्न प्रमाणित होता है।

मास्टर मदन—अर्थात् क्या वहाँ पूर्व, पश्चिम कुछ नहीं जान पड़ता ?

ताऊ जी—नहीं, उत्तरी ध्रुव के चारों ओर दक्षिण ही दक्षिण है।

मास्टर मदन—यह तो बड़ो विचित्र बात है। यह कैसे जान पड़ता है कि चारों ओर दक्षिण ही दक्षिण है ?

ताऊ जी—क़ुतुबनुमा की सुई के द्वारा यह ज्ञात होता है कि चारों ओर दक्षिण ही दक्षिण है।

मास्टर मदन—तो शायद दक्षिणी ध्रुव में चारों ओर उत्तर ही उत्तर ज्ञात होता होगा। परन्तु पहले यह तो बताओ कि दक्षिणी ध्रुव की ओर किस प्रकार और कब कब लोग वहाँ गये।

पाँचवाँ अध्याय

दक्षिणी ध्रुव की यात्रा

ताऊ जी—जब पहले-पहल भूगर्भ-विद्या के यूनानी वैज्ञानिकों ने पृथ्वी के संबंध में यह विचार किया कि वह गोलार्द्ध के आकार की है तब उन्होंने यह भी विचार किया कि दक्षिण में भी इसकी जाँच करनी चाहिए। दक्षिणी शीत कटिबंध के विचार का यहीं से श्रीगणेश समझना चाहिए। कुछ लोगों ने तो धुर दक्षिण में पृथ्वी का अस्तित्व भी मान लिया। किन्तु बाद को यह विचार उनके मस्तिष्क से जाता रहा। योरप के अंधकार-युग में यह विषय ऐसे ही पड़ा रहा, क्योंकि पादरियों की दृष्टि में ऐसे स्थानों की खोज जिनका उल्लेख धार्म्मिक ग्रन्थों में न किया गया हो, एक प्रकार से अनुचित समझा जाता था। किन्तु पंद्रहवीं शताब्दी से इस विषय पर लोगों ने विचार करना शुरू किया, और पहले-पहल पुर्तगाली यात्री इसकी खोज करने को आगे आये। सोलहवीं शताब्दी के आदि में स्पेनी तथा पुर्तगाली यात्रियों ने यह सिद्ध किया कि दक्षिणी अमरीका बहुत दूर तक दक्षिण में फैला हुआ है और 'टेराडेल फ्यूगो' सबसे बड़ा दक्षिणी स्थलीय स्थान है। इसके पश्चात् क्रमशः व लगातार की खोज व जाँच का यह परिणाम हुआ कि छोटे छोटे बहुत-से

द्वीपों का पता लगा। सन् १७७२ ई० और १७७५ ई० में जेम्स कुक का प्रयत्न सबसे अधिक सफल प्रमाणित हुआ और उस समय से दक्षिणी शीत कटिबंध के अनुसंधान ने एक स्थायी रूप धारण कर लिया। कुक ने दो बार उत्तरी शीतोष्ण कटिबंध को पार किया। वह बराबर दक्षिण की ओर बढ़ता गया, परन्तु उसको वहाँ कोई भूभाग न मिला। उसने यह सिद्ध किया कि यदि उस ओर कोई भूभाग भी होगा तो वह एक-दम हिमाच्छादित तथा उजाड़ होगा। जेम्स कुक का विचार था कि जितनी यात्रा दक्षिण दिशा की मैंने की है उससे अधिक अन्य कोई नहीं कर सका है और यदि कोई गया भी होगा तो मुझको उससे किंचित् ईर्ष्या नहीं है, क्योंकि संसार उससे किसी प्रकार का लाभ नहीं उठा सकता। यद्यपि कुक ने अपनी यात्रा में 'साउथ जार्जिया' का पता लगा लिया, तथापि उत्तरी ध्रुव के संबंध में उसके अन्य वक्तव्य इस प्रकार निराशायुक्त और व्यर्थ थे कि लोगों का उत्साह व चाव एक-दम ठंडा पड़ गया। उसने कहा कि दक्षिण के ऊँचे अक्षांशों में किसी प्रकार की सांसारिक तथा व्यापारिक लाभ की आशा नहीं है और इसी लिए दक्षिणी ध्रुव की यात्रा को ओर से लोगों की रुचि कुछ भी नहीं रह गई।

इसके पश्चात् सील के शिकारी दक्षिणी ध्रुव की ओर चले, परन्तु पहले-पहल वे कब इस ओर गये इसका पता नहीं लगता। अलबत्ता इतना ज्ञात है कि उन्नीसवीं शताब्दी के आदि में अमरीका

के मल्लाह अटलांटिक तथा साउथ जार्जिया से चमड़ा लाया करते थे। संभव है कि उनके अतिरिक्त अन्य द्वीपों से भी वे चमड़ा लाते रहे हों। परन्तु इस विचार से कि अन्य व्यक्ति पता पाकर उस व्यापार से लाभ उठाना न शुरू कर दें, उन लोगों ने उस सम्बन्ध की बातों को गुप्त ही रक्खा। इसके पश्चात् डब्ल्यू० स्मिथ ने सन् १८१९ ई० में साउथ शेटलेंड (South Shetland) का पता पा लिया। फिर जी० बावल ने १८२१ ई० में साउथ अर्कनीज़ (South Orkneys) तथा ब्रांसफ़ील्ड ने ट्रेनिटीलैंड का पता लगाया। इसके पीछे १८३८ ई० में एक फ्रांसीसीदल दक्षिणी ध्रुव की ओर गया। उसने ब्रांसफ़ील्ड के अन्वेषण में कुछ अधिक जानकारी प्राप्त की।

जिस समय ये छोटे छोटे दल खोज का काम कर रहे थे उस समय एक दूसरे दल का संगठन ब्रिटिश गवर्नमेंट की ओर से किया जा रहा था। यह बात याद रखने के योग्य है कि कुक के पीछे यही एक ऐसा दल था जिसका संपूर्ण भार ब्रिटिश गवर्नमेंट के ऊपर था। यह दल सर जे० सी० रास की अध्यक्षता में चला। इसके साथ बड़े बड़े मज़बूत जहाज़, उत्तम उत्तम यन्त्र तथा अच्छे अच्छे अनुभवी मनुष्य गये। ऐसे दल-बल के साथ तीन बार दक्षिणी ध्रुव पर जाने का प्रयत्न किया गया। पहली बार सन् १८४१ ई० में ऐसा एक दल गया जिसने साउथ विक्टोरियालेंड इत्यादि का पता लगाया और सन् १८४३ ई० में ग्रेहमलेंड के पास कुछ और छोटी छोटी बातों का पता

लगाया। इसके बाद एक समय तक दक्षिणी कटिबंध की ओर से लोगों का ध्यान हटा रहा, क्योंकि उत्तरी ध्रुव में सर जान फ्रैंकलिन के खो जाने से प्रत्येक व्यक्ति का ध्यान उस ओर चला गया था। इसके पीछे ह्वेल के शिकारियों ने दक्षिणी कटिबंध में जहाँ-तहाँ कुछ नई भूमि का पता लगाया। एक जर्मन-यात्री ने सन् १८७४ ई० में ग्रेहमलेंड के निकट थोड़ी-सी भूमि का पता लगाया था। उनमें सबसे अधिक उल्लेखनीय वृत्तान्त सन् १८९२ ई० से सन् १८९४ ई० तक स्काटलेंड तथा नार्वे के यात्रियों का है।

सन् १८९८ ई० में बेलजियम की ओर से कुछ लोग दक्षिणी कटिबंध की ओर गये। ये लोग ग्रेहमलेंड के पश्चिम दिशा तक गये और अपनी इस यात्रा में वनस्पतियों तथा जल-वायु के संबंध के बहुमूल्य अनुभव लेकर वापस आये। बीसवीं शताब्दी का प्रारम्भिक काल दक्षिणी कटिबंध के अनुसंधानों का सुनहरा समय है। उत्तरी ध्रुव की बहुत-सी कठिन समस्यायें सुगम हो चुकी थीं या सुगम होने के निकट हो गई थीं, परन्तु दक्षिणी कटिबंध के महाद्वीप में प्रवेश करने का अभी तक किसी को अवसर न मिला था। यद्यपि ऐसे न जाने हुए प्रदेश में जो कई लाख वर्ग मील में फैला हुआ हो, नवीन आविष्कार के अनुसार बहुत-कुछ खोज की आवश्यकता थी। ब्रिटेन में सर जान मरे और सर सी० आर० मारखम तथा जर्मनी में कतिपय प्रतिष्ठित लोग उसके सम्बन्ध में ज़ोरों का आन्दोलन

कर रहे थे। परिणाम यह हुआ कि कई दल भिन्न भिन्न स्थानों से इस यात्रा के लिए तैयार हो गये। परन्तु इन दलों में प्रतिद्वन्द्वी रूप से परस्पर कोई ईर्ष्या न थी। सबका तात्पर्य यह था कि सब लोग संगठित रूप से दक्षिणी प्रदेशों के निरीक्षण में प्रयत्न करें। उस अज्ञात भूमि के संबंध में सबका यह विचार था कि वह इतनी विस्तृत है कि ऐसे बीसों यात्री-दल उसकी खोज करने के लिए काफ़ी न होंगे।

ब्रिटिश-दल कैप्टन आर० एफ़० स्काट की अध्यक्षता में सन् १९०१-०४ में गया। इस दल ने विक्टोरियालेंड में कुछ थोड़ी-बहुत जाँच-पड़ताल की। जर्मन-दल ने १९०२ ई० में विलियमलेंड का पता लगाने के अतिरिक्त और कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया। स्वीडनवालों के दल ने भी कुछ लाभदायक कार्य्य किया, किन्तु वह भी विशेष उल्लेखनीय नहीं था। इसी भाँति स्काटलेंड तथा फ़्रांस के यात्रियों ने भी थोड़ा-बहुत काम किया। संक्षेपतः ये सब लोग १९०३ ई० से लेकर १९०५ ई० तक वापस आ गये और बहुत-कुछ नई बातों का ज्ञान प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् सन् १९०९ ई० में मिस्टर ई० एच० शेकलटेन ने जो स्काट के प्रारम्भिक यात्रा में साथ रह चुके थे, ध्रुव पर पहुँचने की प्रतिज्ञा की। उन्होंने आइसबेरियर के पश्चिम में बहुत-कुछ भूमि का पता लगा लिया और एक बड़ी सीमा तक यात्रा के मार्गों का अनुमान भी कर लिया। इसके पश्चात् सन् १९१०-१३ में कप्तान स्काट ने उनके खोजे हुए

मार्गों से ध्रुव पर पहुँचने का संकल्प किया। कप्तान स्काट ध्रुव पर पहुँच गये, परन्तु उन्हें पहुँचने पर यह ज्ञात हुआ कि उससे ३४ दिन पूर्व आर० अमण्डसन ध्रुव पर पहुँच चुका था।

मास्टर मदन—फिर उसके पीछे कोई दक्षिणी ध्रुव की ओर नहीं गया ?

ताऊ जी—नहीं, इसके पीछे भी डाक्टर डी० मासन जो शेकलटेन के दल में सम्मिलित थे और कप्तान जे० के० ड्यूस इत्यादि ने भी दक्षिणी प्रदेशों के सम्बन्ध में बहुत-सी बातें ज्ञात कीं।

दक्षिणी कटिबंध के पशु

अच्छा अब दक्षिणी कटिबंध के पशुओं का वृत्तान्त सुनो। उत्तरी कटिबंध की अपेक्षा दक्षिणी प्रदेशों में बड़े बड़े जानवरों की संख्या बहुत ही कम है। स्थल के पशु तो बिलकुल ही नहीं हैं। रीछ, लोमड़ी, रेनडियर इत्यादि की भाँति कोई पशु दक्षिणी प्रदेशों में नहीं पाया जाता। वनस्पति खानेवाले पशुओं के लिए न वहाँ कोई भोजन-सामग्री है और न मांसाहारी जानवरों के लिए कोई शिकार है। जो कुछ जन्तु हैं वे सब समुद्री हैं।

सील

दक्षिणी कटिबंध के प्रदेशों में सील चार भाँति की होती

है। उत्तरी कटिबंध के प्रदेशों की सील की भाँति दक्षिणी सील के भी कान नहीं होते। व्यापारिक लाभ की दृष्टि से इन सबके चमड़े बहुत काम के हैं। वेडल सील इनमें से बहुत साधारण है और दक्षिणी कटिबंध के समुद्र-तटों पर अधिकता से पाई जाती है। जाड़े के दिनों में यह प्रायः फ़ाकलेंड, करगलेन तथा न्यूज़ीलेंड (New Zealand) तक आ जाती है। इसका क़द ९ फ़ुट का और भार १० मन के लगभग होता है। यह अन्य दक्षिणी प्रदेशों के पशुओं की भाँति निडर और ढीठ होती है।

मास्टर मदन—क्या यह मनुष्यों से नहीं डरती? क्या इसमें इतना साहस होता है?

ताऊ जी—नहीं, इसका निडर और ढीठ होना साहस और वीरता के कारण नहीं है, किन्तु अनभिज्ञता के कारण है। चूँकि उस ओर ऐसा कोई जन्तु नहीं है जो इन पर आक्रमण करे, इसलिए वहाँ के जन्तु निर्भय रहते हैं। हाँ, तो मैं वेडल सील के विषय में कह रहा था। सौ वर्ष हुए होंगे कि इस सील का चमड़ा जे० वेडल उस ओर से लाये थे। कई वर्ष तक एडिनबरा के अजायबघर में यह खाल प्रदर्शनी के लिए रक्खी रही। उस समय वह दक्षिणी कटिबंध का एक अत्यन्त अप्राप्य जन्तु समझा जाता था, किन्तु अब तो वह एक बहुत ही साधारण जीव समझा जाता है। वेडल सील का नाम भी शायद इन्हीं वेडल साहब के नाम पर रक्खा गया है।

ह्वाइट क्रीब ऐटर

दूसरे प्रकार की सील ह्वाइट क्रीब ऐटर है। यद्यपि यह सुगमता से नहीं मिलती, तथापि बहुत कम भी नहीं होती। यह झुंड में बहुत कम दिखाई देती है। अधिकांश में अलग अलग रहती है। यह वेडल सील की अपेक्षा अधिक तेज़ और फ़ुर्तीली होती है। वेडल सील इससे अधिक सुस्त और भद्दी होती है। यह समुद्र-तट के निकट बहुत कम आती है और खुले हुए जल में अधिक रहती है, किन्तु दक्षिणी प्रदेशों से बाहर नहीं जाती।

रास सील

तीसरे प्रकार की सील का नाम रास सील है। यह दक्षिणी प्रदेशों की अन्य सीलों की अपेक्षा बहुत कम मिलती है। उसी से मनुष्य इससे बहुत कम परिचित हैं। न यह किसी झुंड में दिखाई देती है और न यही ज्ञात होता है कि यह बच्चे कहाँ देती है। यह बहुत तेज़ और बड़ी तैरनेवाली होती है। यह बर्फ़ की तैरती हुई चट्टान के समीप कभी कभी दिखाई देती है और उत्तर की ओर कभी नहीं जाती। कभी कभी इसका क़द वेडल सील के लगभग होता है। बहुत कम यात्रियों ने इस अद्भुत तथा एकान्त में रहनेवाली सील को देखा है, बल्कि अधिकांश यात्रियों ने तो इसकी झलक तक न देखी होगी।

समुद्री सिंह

यह चौथे प्रकार की सील है। इसका नाम समुद्री सिंह इस कारण रक्खा गया है कि यह अत्यन्त भयानक तथा ख़ूनी होती है। यह दक्षिणी प्रदेशों के समस्त सीलों से बड़ी होती है। यह १४ फ़ुट लम्बी और १३ मन के लगभग भारी होती है। यह भी बहुत कम दिखाई पड़ती है और झुंड में तो बिलकुल ही नहीं रहती। इसकी एक विशेषता यह है कि यह बहुत फ़ुर्तीली होती है। यह वहाँ के पक्षियों का शिकार भी करती है। जो पक्षी इसको बर्फ़ की बहती हुई चट्टान पर देख पड़ते हैं, यह उनको पकड़ कर खा जाती है। सील जितने प्रकार की होती हैं उनमें केवल यही ऐसी है जो मनुष्यों पर भी आक्रमण करती है।

मास्टर मदन—मनुष्य जब इसका शिकार करना चाहते होंगे तब यह आक्रमण करती होगी ?

ताऊ जी—नहीं, बिना कारण भी यह मनुष्य को देखकर आक्रमण करती है।

मास्टर मदन—उत्तरी ध्रुव में तो इस्कीमो तथा योरपीय लोग सीलों का शिकार करके इनको समाप्त किये ही दे रहे हैं। क्या यही दशा दक्षिणी ध्रुव की सीलों की भी हो रही है ?

ताऊ जी—नहीं, दक्षिणी ध्रुव की ओर सीलों का शिकार इतनी अधिकता से नहीं किया जाता। इस कारण उनके कम

होने की संभावना नहीं है। साउथ जार्जिया में इधर-उधर वेडल सील मार ली जाती है, किन्तु वह अच्छी नहीं समझी जाती; इस कारण लोग उसका शिकार अधिक नहीं करते। इसी से दूसरे प्रकार की सीलें भी बची रहती हैं। सन् १८९३ ई० में एक शिकारी पाँच हज़ार वेडल सीलों का शिकार करके लाया था। किन्तु उनकी बिक्री बहुत कम हुई।

दक्षिणी कटिबंध के प्रदेशों के समीप दो प्रकार की और सीलें होती हैं। उनका शिकार अलबत्ता बहुत अधिकता से किया जाता है।

दक्षिणी फ़्रे सील

इन सीलों में से एक को फ़्रे सील कहते हैं। यह अपनी खाल के कारण बहुमूल्य समझी जाती है। एक शताब्दी व्यतीत हुई कि इस प्रकार की सीलों के झुंड के झुंड साउथ-लेंड में एकत्र हुआ करते थे और उनसे साउथ आर्कनीज़ (South Orkneys) तथा साउथ जार्जिया (South Georgia) के भी लोग भली भाँति परिचित थे। किन्तु शिकारियों ने गत शताब्दी के प्रारम्भ में साउथ जार्जिया और फ़ाकलेंड में उनको बिलकुल समाप्त कर दिया। कप्तान ई० फ़ोनिंग ने १८०० ई० में १८ जहाज़ों में इनका चमड़ा भरकर साउथ जार्जिया में एकत्र किया। फिर एक लाख १२ हज़ार खालें केवल एक वर्ष में और लाई गईं। इसके पश्चात् ५ हज़ार से २० हज़ार खालें साउथ शेटलेंड में फिर लाई गईं। इस भाँति दो-तीन वर्ष में

दक्षिणी फ़र सील एक-दम नष्ट कर दी गई। अब इन स्थानों पर यह सील शायद ही कभी दिखाई देती हो। फिर भी जब कभी दिखाई देती है तब लोग इसका शिकार अवश्य करते हैं। इस कारण बड़ी कठिनाई से कभी कभी इस प्रकार की कोई एक-आध सील दिखाई पड़ जाती है।

समुद्री हाथी

दूसरे प्रकार की सील को समुद्री हाथी कहते हैं। समुद्री हाथी अपने तेल के कारण विशेष प्रसिद्ध है। इसका क़द १६ फ़ुट से लेकर २० फ़ुट तक होता है। इसके थूथन का चमड़ा विचित्र ढङ्ग से ऊपर को उठा होता है। इसी कारण इसको समुद्री हाथी कहते हैं। यह सील बहुत ही सुस्त और भद्दी होती है और प्रायः समुद्र-तट के समीप ही पड़ी रहती है। इसी कारण इसका शिकार भी बड़ी सुगमता से किया जाता है। साउथ जार्जिया में १९१० ई० से लेकर १९१८ ई० तक छब्बीस हज़ार ये सीलें मारी गईं, परन्तु १९१९ ई० से इनकी रक्षा का प्रयत्न किया जाने लगा है। इस कारण अब इनकी संख्या में वृद्धि हो रही है। मैक्यूरी-द्वीप (Macquarie Island) तथा करग्यूलेन (Kerguelen) में अब ये अधिकता से पाई जाती हैं। किन्तु अभी थोड़े दिनों की बात है कि दो हज़ार तीन सौ समुद्री हाथियों का शिकार किया गया था। तिस पर भी वे अधिक संख्या में विद्यमान हैं। फ़्रांस की ओर से उनकी केवल नाममात्र को रक्षा की जाती है।

किलर ह्वेल

किलर ह्वेल ह्वेल के ही समान होती है। व्यापारिक दृष्टि से लोग इसका शिकार नहीं करते। दक्षिणी कटिबंध की ह्वेल में यह विशेषता है कि वह सील पर बल्कि कभी कभी अन्य किलर ह्वेल पर भी आक्रमण करती है। मिस्टर ऐ० जे० वीलियर्स ने (A. J. Villars) राससागर (Rass Sea) में किलर ह्वेल की लड़ाई का तमाशा स्वयं अपनी आँखों से देखा था। उनका कहना है कि एक ह्वेल से पाँच किलर ह्वेलें चिपट गईं। वह अकेली ह्वेल अपने प्राण बचाने लगी; परन्तु उनमें से तीन ह्वेलें इसको इधर-उधर से नोचने लगीं और दो ह्वेलें उसकी पीठ पर इस प्रकार दौड़ दौड़ कर धक्के देने लगीं कि वह बेचारी एकदम विवश होकर बेसुध हो गई अंत में इन पाँचों ने मिलकर उसका जबड़ा फाड़ डाला और दम भर में चीर फाड़ कर उसे खा गईं।

मास्टर मदन—तो वह ह्वेल कुछ कर ही न सकी ?

ताऊ जी—नहीं पहले तो वह इन पाँचों से ख़ूब लड़ी, लेकिन बेचारी अकेली क्या कर सकती थी ? परिणाम यह हुआ कि उन पाँचों ने मिलकर उसे हरा दिया और जब वह मर गई या मरने के निकट हुई तब उसे नोच नोच कर खा गईं।

छठा अध्याय

दक्षिणी कटिबंध के पक्षी

मास्टर मदन—दक्षिणी कटिबंध के पक्षियों का भी तो कुछ वर्णन कीजिए ?

ताऊ जी—दक्षिणी कटिबंध में बड़े विचित्र पक्षी होते हैं। समुद्र में अधिक चारा होने के कारण ये वहाँ बहुत होते हैं, यद्यपि होते हैं थोड़े ही मेल के। इनमें पेनगूइन (Penguin) नाम का पक्षी अधिक होता है।

पेनगूइन

मास्टर मदन—पेनगूइन कैसा होता है ?

ताऊ जी—पेनगूइन एक जल का पक्षी है। यह दक्षिणी कटिबंध के किसी विशेष स्थान पर नहीं होता, किन्तु दक्षिणी महाद्वीप के समस्त ठंडे स्थानों तथा समुद्री द्वीपों में इसके घोंसले होते हैं। इसकी कुछ जातियाँ एन्टार्कटिक सागर में भी पहुँच जाती हैं तथा वहाँ उनकी एक विशेष जाति बन जाती है।

सम्राट् पेनगूइन

इन्हीं में से एक विशेष प्रकार एम्परर पेनगूइन या सम्राट् पेनगूइन नाम का एक विशेष प्रकार का पक्षी होता है। यह

धुर दक्षिण में पाया जाता है और बहुत ही कम मिलता है। यह तीन फ़ुट लम्बा होता है और लगभग एक मन भारी होता है। यह धीरे धीरे विशेष ढंग से चलता है और मनुष्यों को देखकर बहुत कम भड़कता है। दूसरे पेनगूइन की भाँति यह बड़ी फ़ुर्ती से बर्फ़ के निचले भाग में चला जाता है और बड़ी तेज़ी से तैरने लगता है। सम्राट् पेनगूइन साधारण पेनगूइन पक्षियों के साथ नहीं रहता, किन्तु वह बहुधा अकेला और कभी कभी अपने घोंसले के समीप ही दिखाई देता है। वह छोटे छोटे पेनगूइन पक्षियों का शब्द सहन नहीं कर सकता। सम्राट् पेनगूइन की यह एक अद्भुत बात होती है कि वह एक ही अंडा देता है। उसकी मादा एक अंडे को अपने पाँव पर रखकर सेती है।

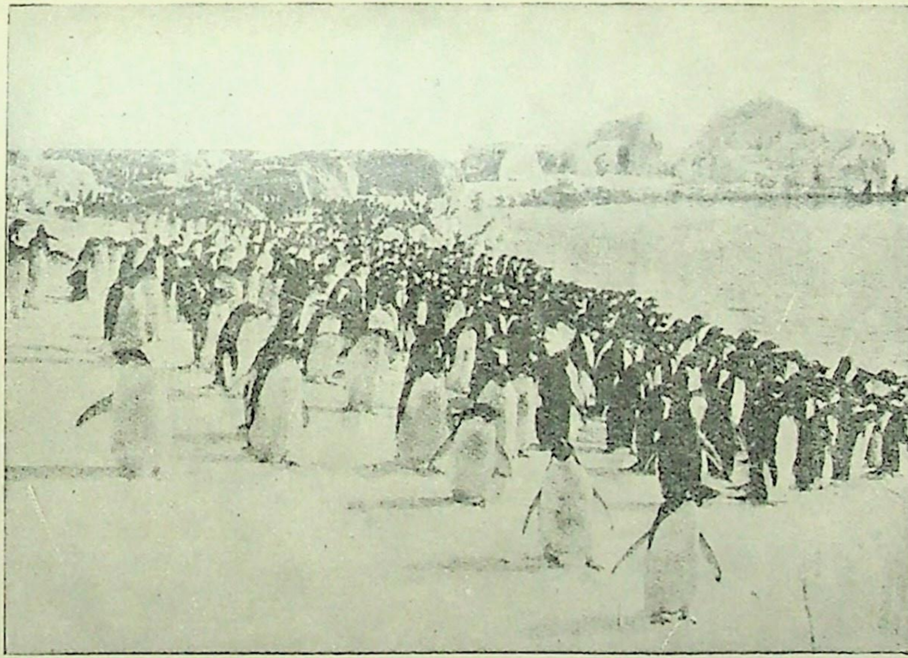
मास्टर मदन—पाँव पर रखकर कैसे सेती है ?

ताऊ जी—यह अपने पर तथा खाल के एक भाग को पाँव पर फैला लेती है और उसी पर अंडा रखकर सेती है। इसके बच्चे बड़ी कठिनाई से जीवित रहते हैं। इसी कारण यह बहुत कम पाया जाता है। इसके घोंसले भी दो ही तीन देखने में आये हैं। इसके अतिरिक्त पेनगूइन की और भी जातियाँ हैं।

सिया गलो या ऐडीलाई पेनगूइन

मास्टर मदन—और कौन कौन-सी जातियाँ हैं ?

ताऊ जी—दो-तीन जातियाँ पेनगूइन की और हैं, जो



पेमगूइन

बहुत छोटी होती हैं और साधारण हैं और इस योग्य नहीं कि उनका उल्लेख किया जाता। अलबत्ता पेनगूइन की एक और जाति है, जिसको सिया गलो या ऐडोलाई पेनगूइन कहते हैं। यह बहुत साधारण है और इस जाति के पेनगूइन अधिकता से पाये जाते हैं। इसके गले के समीप का भाग काला होता है और दूर से यह मनुष्य के समान प्रतीत होता है। दक्षिणी कटिबंध के समुद्र-तट पर इनके झुंड के झुंड दिखाई देते हैं। दक्षिणी कटिबंध के मुख्य जीव इन्हीं को कहना चाहिए। वहाँ के ठंडे तथा जमे हुए स्थलों में इनकी चहचहाट से जान पड़ता है कि यहाँ भी जीवधारी रहते हैं। यह बहुत चपल तथा चंचल होता है। यात्री भी इसे देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं और इसको इस बात का चिह्न समझते हैं कि जाड़े के उदासीन दिन अब समाप्त होगये हैं।

जन्तु

एक और पक्षी होता है जिसको जन्तु कहते हैं। यह बड़ा कायर होता है और देखने में कुछ भला भी नहीं लगता। यह कटिबंध से दूर दूर तक पाया जाता है। यद्यपि यह ध्रुव का एक दूसरा पक्षी है, परन्तु इसको भी पेनगूइन की ही एक जाति समझना चाहिए। यह सिया गलो ऐडीलाई पेनगूइन की भाँति अत्यन्त चतुर व चैतन्य होता है। किन्तु इसकी संख्या बहुत कम है। यह केवल बर्फ़ानी समुद्रों में रहता है।

बस दक्षिणी कटिबंध के पक्षी इतने ही हैं। इनके अतिरिक्त जो पक्षी हैं वे दक्षिणी महासागर के हैं, जो गर्मी के दिनों में दक्षिणी कटिबंध में आ जाते हैं। उनके नाम हैं—पेट्रेल, जाइन्ट पेट्रेल, सनोाई पेट्रेल, कीव योजन इत्यादि इत्यादि।

मास्टर मदन—दक्षिणी कटिबंध में जब जीव-जन्तुओं की इतनी कमी है तब क्या दूसरे स्थानों से जीव-जन्तु ले जाकर वहाँ नहीं पाल सकते ?

ताऊ जी—इसका भी अनुभव किया गया है। सन् १९०५ ई० में एक कंपनी ने कुछ भेड़-बकरियाँ साउथ जार्जिया में ले जाकर छोड़ दीं। परिणाम यह हुआ कि वे सब की सब मर-खप गईं।

मास्टर मदन—इसका क्या कारण है ?

ताऊ जी—कारण यह है कि एक तो जल-वायु और मौसम प्रतिकूल है, दूसरे घास और चारे की यह दशा है कि कहीं ही कहीं मिलती है और जो घास मिलती भी है वह बहुत कड़ी होती है। चरने के काम की नहीं होती। भेड़ें यदि किसी प्रकार गर्मी में बच गईं तो बच गईं, किन्तु जाड़े के दिनों में किसी प्रकार जीवित नहीं रहतीं। यही दशा बकरों की भी होती है। सन् १९०५ ई० में कुछ घोड़े तथा घोड़ियाँ भी वहाँ छोड़ दी गई थीं। परिणाम यह हुआ कि सबकी सब जंगली बन गईं और थोड़े दिनों के पीछे उनकी भी समाप्ति होगई। ख़रगोश भी पाले गये, परन्तु उसमें भी

असफलता रही। अलबत्ता भूरे रंग के चूहे एक शताब्दी तक जीवित रहे। ये पक्षियों के अंडे और घास खाते थे। सबसे विचित्र बात यह है कि नार्वे से रेनडियर लाकर रक्खे गये। सन् १९११-१२ में हरिन लाकर पाले गये। इनके झुंड की वृद्धि भी हुई, किन्तु कठिनाई यही है कि इनको वहाँ काफ़ी चारा ही नहीं मिलता। अब यह विचार हो रहा है कि उत्तरी कटिबंध की लोमड़ियाँ ले जाकर वहाँ रक्खी जायँ। संभव है कि इसमें सफलता हो। परन्तु ये लोमड़ियाँ केवल पेनगूइन का शिकार करके जीवित रह सकती हैं। इसके अतिरिक्त इनके भोजन का और क्या प्रबन्ध हो सकता है?

मास्टर मदन—साउथ जार्जिया के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर इसका प्रयत्न नहीं किया गया?

ताऊ जी—किर्गलिन (Kirgaulen) साउथ जार्जिया की अपेक्षा इसके लिए अधिक उपयुक्त स्थान समझा जाता है। साउथ जार्जिया पहाड़ी स्थान है। इसके प्रतिकूल किर्गलिन में चरागाह भी हैं। किन्तु घास कुछ मोटी तथा कड़ी होती है। वर्फ़ भी यहाँ थोड़े दिनों तक ही रहती है। इसलिए १९१३ ई० में एक हज़ार भेड़ें किर्गलिन में ले जाकर पाली गईं और तीन गड़रिये उनकी रखवाली के लिए नियत किये गये। किन्तु इस प्रयत्न में भी सफलता नहीं मिली। इससे पूर्व सन् १९०९ ई० में जो प्रयत्न किया गया था उसमें किसी दशा तक सफलता के चिह्न भी पाये गये थे। तात्पर्य्य यह कि

किर्गलिन भी भेड़ों के लिए कुछ अधिक उपयुक्त स्थान नहीं। निस्संदेह रेनडियर का अब तक कोई प्रयत्न सफल नहीं हुआ। उत्तरी कटिबंध की लोमड़ियाँ भी संभवतः वहाँ नहीं पल सकेंगी। उनके लिए वहाँ काफ़ी शीत नहीं है।

मास्टर मदन—दक्षिणी ध्रुव की ओर तो कप्तान स्काट गये थे और वापसी में बेचारे वहीं मर गये। उनका भी कुछ वृत्तान्त सुनाइए।

सातवाँ अध्याय

कप्तान स्काट की यात्रा का वर्णन

पहली यात्रा

ताऊ जी—कप्तान स्काट ने दो बार दक्षिणी ध्रुव की यात्रा की। पहली यात्रा के लिए 'डिसकवरी' नामक एक विशेष जहाज़ तैयार कराया गया था। उस पर उन्होंने आवश्यक सामग्री के सहित तथा मुख्य मुख्य मित्रों के साथ सन् १६०१ ई० में दक्षिणी ध्रुव की ओर प्रस्थान किया। वे दक्षिणी कटिबंध के समुद्र में बहुत दूर तक गये, किन्तु ठीक ठीक दक्षिणी ध्रुव तक नहीं पहुँच सके। उत्तरी ध्रुव (जैसा कि तुम्हें ज्ञात है) गहरे समुद्र के जमे हुए धरातल पर स्थित है। उससे निकटवर्ती स्थल-प्रदेश ७०० मील से कम दूरी पर नहीं है। परन्तु दक्षिणी ध्रुव की व्यवस्था इससे बिलकुल भिन्न है। इसके समीप एक विस्तृत तथा स्वच्छ मैदान है, जिसमें बहुत ऊँचे ऊँचे पहाड़ हैं। इन पहाड़ों में कुछ बुझे हुए ज्वालामुखी पहाड़ हैं, जो दस हज़ार फ़ुट से तेरह हज़ार फ़ुट तक ऊँचे हैं। दक्षिणी ध्रुव के प्रदेशों में उष्णता उत्तरी ध्रुव की अपेक्षा कम जान पड़ती है। एन्टार्कटिक महाद्वीप समुद्र से घिरा हुआ है। इस कारण वहाँ निवास करने के लिए स्थान बहुत

कम हैं। महाद्वीप के चारों ओर बर्फ़ की बड़ी बड़ी भयानक शिलायें देख पड़ती हैं।

कप्तान स्काट अपनी इस यात्रा में लगभग दो वर्ष तक दक्षिणी प्रदेशों में रहे। उन्होंने इसी समय बहुत विचित्र तथा सुन्दर वस्तुएँ देखीं तथा नवीन अनुभवों का ज्ञान प्राप्त किया। परन्तु अन्त में भोजन-सामग्री की न्यूनता, जाड़े की कठिनाई, साथियों की बीमारी इत्यादि के कारण उन्हें असफल होकर वापस आना पड़ा। इसके बाद १९०८ ई० में लेफ्टिनेंट शेकलटन ने दक्षिणी ध्रुव पर जाने का प्रयत्न किया। यात्रा में उनको बड़ी बड़ी विपत्तियाँ झेलनी पड़ीं। उनके साथ के सब टट्टू मर गये। अन्त में विवश होकर उनको एक ऐसे स्थान से लौटना पड़ा जहाँ से दक्षिणी ध्रुव केवल ९७ मील रह गया था।

दूसरी यात्रा

इसके बाद कप्तान स्काट ने दूसरी यात्रा की। इस बार उन्होंने बड़ी सावधानी से यात्रा की तैयारी की। इस यात्रा के लिए केवल यही आवश्यक न था कि गरम गरम पोस्तीनें पहनने के लिए एकत्र की जायँ, किन्तु ऐसे साथियों की भी आवश्यकता थी जो सभ्य तथा सहनशील हों। भोजन-सामग्री जो साथ हो वह ऐसी हो कि उसको ले जाने में सुगमता हो, साथ ही वह पुष्टिकारक भी हो, क्योंकि गर्मी के दिनों में तो मनुष्य कुछ कम खाकर भी जीवित रह सकता है, किन्तु जहाँ

अधिक सर्दी हो और अच्छा भोजन भी न प्राप्त हो, वहाँ मनुष्य शीघ्र ही मृत्यु की गोद में चला जाता है। फिर इसके सिवा ईंधन का भी प्रश्न था। किस प्रकार की भोजन-सामग्री तथा ईंधन वहाँ ले जाना चाहिए इसका कुछ समय तक वे विचार करते रहे। उनका कमरा इस प्रकार की सामग्री का एक अजायबघर बन गया था। टीन के डिब्बे जिनमें खाने-पीने की सामग्री भरी हुई थी, रस्सियाँ, फूस, जूते तथा पोस्तीनें—तात्पर्य्य यह कि समस्त वस्तुएँ जो इस यात्रा में आवश्यक थीं और जिनका उन्होंने उचित प्रबन्ध कर लिया था, एकत्र कीं। उन सबको उचित ढङ्ग तथा सावधानी से जहाज़ पर लादकर वे १५ जून १९१० ई० को इस यात्रा के लिए रवाना हुए। उन्होंनें ३६ कुत्ते और १४ टट्टू भी साथ लिये थे, दक्षिणी कटिबंध के द्वीप-समूहों में वे उनसे काम लेने के विचार से ले गये थे। वे और उनके साथी जब केरोजेर अन्तरीप (Cape Croziere) पर पहुँचे तब उस समय समुद्र में बड़ा भयानक तूफ़ान था। वे वहाँ नहीं रुके और सैकड़ों विपत्तियों को झेलते हुए किसी प्रकार (M. C. Murda) मरडो की खाड़ी को पार कर वे ऐरीबस पर्वत (Mt. Erobus) की तराई में पहुँच गये। ऐरीवस पर्वत १३,५०० फ़ुट ऊँचा है। यहाँ एक बड़े सुनसान तथा भयानक स्थान पर उन्होंने अपना तम्बू खड़ा किया और उसका नाम वनटन कैम्प (Oneton Camp) रक्खा। यहाँ उन लोगों ने छत और दीवारें खड़ी कीं

और साथ की सब सामग्री उसमें सुरक्षित रूप से रक्खी। इस स्थान को उन्होंने अपनी यात्रा का डिपो बनाया। दक्षिणी ध्रुव इस स्थान से सैकड़ों मील दूर था, जहाँ इससे पूर्व कभी मनुष्य का पैर नहीं पड़ा था; चारों ओर बर्फ़ के ढेर थे और जीवन-चिह्न एकदम अदृश्य थे; जहाँ जाड़े के दिनों में बड़े प्रचण्ड तूफ़ान आते हैं और बर्फ़ के टुकड़े भूमि से उठ उठकर वायु-मंडल में उड़ते हैं।

पहले तो कप्तान स्काट और उनके साथियों ने स्लेज (बर्फ़ पर चलनेवाली गाड़ियाँ) की सहायता से इस यात्रा को पूरी करना चाहा। घोड़े भी यात्रा की थकान दूर करके ठीक हो गये थे, इसलिए उन्होंने अपना कार्य बड़ी उत्तमता से किया और यात्रा-मार्ग का कुछ भाग शीघ्र ही पार हो गया। परन्तु अंत में कड़ा जाड़ा होने के कारण घोड़े बीमार हो होकर मरने लगे और स्लेजगाड़ियाँ भी बिगड़ गईं। जिस स्थान पर उन्हें इस तरह की कठिनाइयों से सामना करना पड़ा उसका नाम उन लोगों ने '३१° का कैम्प' रख दिया। अब वे लोग वहाँ से पैदल चले। उन्हें बर्फ़ का धरातल बहुत गहरा और नर्म मिलने लगा, इससे कठिनाइयाँ और भी बढ़ गईं और उनके लिए मार्ग चलना भी कठिन हो गया। इस कारण कहीं कहीं उन लोगों ने झोंपड़े बना बना कर उनमें भोजन-सामग्री तथा ईंधन रखना प्रारंभ कर दिया, जिससे वापसी पर ये सब वस्तुएँ उनको मिलती रहें और साथ ही वे चलने को हलके भी हो

जायँ। अंत में यात्रा की विपत्तियों तथा दुःखों के कारण ये बहादुर यात्री भी बीमार होने लगे। इनकी भोजन-सामग्री भी कम हो गई। अर्थात् चार मनुष्यों के लिए केवल एक सप्ताह का भोजन शेष रह गया। कप्तान स्काट ने यह निर्णय किया कि उनके चार साथी लौट जायँ। इन चार वीरों को उनका यह निर्णय पसन्द नहीं हुआ, तो भी उन्होंने सहर्ष उनकी आज्ञा का पालन किया और वनटन डिपो को लौट गये। अब कप्तान स्काट के साथियों में कप्तान ओट्स यूनस, डाक्टर वेलसन तथा लेफ्टिनेंट बावर्स रह गये।

अब यह छोटा दल ध्रुव की ओर पैदल चला। किन्तु यात्रा की बाधायें इतनी दुखमय थीं कि एक एक पग चलना कठिन हो गया। कभी वे बर्फ़ की चट्टान से टकरा जाते थे, कभी लड़खड़ाते और कभी गिर पड़ते थे, स्लेज का खींचना कठिन हो रहा था। बड़ी कठिनाई से किसी प्रकार ग्लेशियर का वह विस्तृत मैदान समाप्त हुआ और वे दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच गये। दुखी यात्रियों ने अपना कार्य्य सिद्ध कर लिया और अब वे बड़े उत्साह से यूनियन जैक (अँगरेज़ी राज्य का झंडा) लेकर बढ़े कि दक्षिणी ध्रुव की उँचाई पर झंडा गाड़ दें, किन्तु उनके आश्चर्य की सीमा का कुछ ठिकाना न था जब उन्होंने देखा कि उस दुर्गम स्थान पर किन्तु मनुष्य-शून्य स्थान पर एक ख़ीमा गड़ा हुआ है जिस पर पाँच मनुष्यों के नाम लिखे हैं—

(१) रिचर्ड अमण्डसन (Richard Ammundson)
(२) आलव्जेलेंड (Olav Bjalland)
(३) हिल्मर हेनसन (Hilmer Henssen)
(४) सोरे हेसेल (Suerre Hassell)
(५) आस्कर वेस्टिंग (Oscare Wisting)

१६ दिसम्बर १९११ ई०

विचार करने की बात है कि यद्यपि वे इस स्थान पर सबसे पहले नहीं पहुँच सके, नार्वे के यात्रियों का एक दल उनसे एक मास पूर्व उस स्थान पर पहुँच चुका था, तो भी स्काट तथा उनके साथियों के संतोष के लिए केवल इतना बहुत था कि वे भी किसी न किसी प्रकार दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच गये।

मास्टर मदन—यह क्या हुआ ? वे लोग किस प्रकार कप्तान स्काट से पहले पहुँच गये ?

अमण्डसन दक्षिणी ध्रुव पर पहले पहुँचे

ताऊ जी—जब मैंने दक्षिणी ध्रुव के यात्रियों का वर्णन किया था तब मैंने कहा था कि कप्तान स्काट से ३४ दिन पहले कप्तान अमण्डसन दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच गये थे। कप्तान स्काट ने दक्षिणी ध्रुव पर पहुँचने पर वहाँ के खीमे पर उन्हीं कप्तान अमण्डसन और उनके साथियों का नाम लिखा हुआ देखा। कप्तान अमण्डसन की यात्रा का वर्णन इस प्रकार है। पहले तो उन्होंने उत्तरी ध्रुव जाने

का निश्चय किया था, परन्तु जब उनको कप्तान पेरी की सफलताओं की सूचना मिली तब वे उत्तरी ध्रुव के बदले दक्षिणी ध्रुव की ओर चल पड़े। उनके पास वही जहाज़ फ्राम था जिसको नानसेन ने उत्तरी ध्रुव की ओर बहाव पर छोड़ दिया था। अमण्डसन को यह भी ज्ञात था कि कप्तान स्काट भी दक्षिणी ध्रुव को गये हैं। समस्त संसार के मनुष्यों की दृष्टि इन दोनों यात्रियों के कारनामों की ओर लगी हुई थी।

अमण्डसन ने दक्षिणी अमरीका के पूर्वी समुद्र-तट से होकर ह्वैलस की खाड़ी में १४ जनवरी १९११ को लंगर डाला था। इस समय कप्तान स्काट का दल एरेबस पर्वत (Erebus) की घाटी में तंबू डाले पड़ा था, जो ह्वैलस की खाड़ी से ३५० मील पूर्व-दिशा में था। जब वसंत-ऋतु आई तब अमण्डसन चार मनुष्य, चार बर्फ़ानी गाड़ियाँ और ५२ कुत्ते लेकर २० अक्टूबर सन् १९११ को कप्तान स्काट के जाने के पूर्व ७ दिन पहले दक्षिणी ध्रुव की ओर गये थे। नार्ववालों के इस दल को उचित मौसम और ठोस बर्फ़ मिली, इसलिए यद्यपि पर्वत-श्रेणियों पर चढ़ने में उनके कुछ कुत्ते नष्ट हो गये, फिर भी वे १६ दिसम्बर १९११ को दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच गये और उस स्थान पर उन्होंने ख़ीमा खड़ा किया और उस पर नार्वे देश का झंडा तथा फ्राम जहाज़ की पताका ऊँची कर दी। उन्होंने दक्षिणी ध्रुव के चारों ओर के प्रदेशों का नाम नार्वे के बादशाह के नाम पर हैकन सप्तम प्रदेश (Haakan VII Land)

रक्खा और अपने तम्बू के भीतर कुछ काग़ज़ और एक पत्र कप्तान स्काट के लिए इस विचार से छोड़ गये कि कदाचित् वे जीवित नार्वे न पहुँच सकें तो कप्तान स्काट उस पत्र को हैकन सप्तम की सेवा में उपस्थित कर दें।

कप्तान स्काट की दक्षिणी ध्रुव से वापसी

अमण्डसन के दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच जाने से कप्तान स्काट के हृदय में न ईर्ष्या ही हुई, न निराशा ही। इसका प्रमाण उनके रोज़नामचे से मिलता है। जनवरी १९१२ को कप्तान स्काट ने अपने साथियों के सहित लौटने का निश्चय किया। उनको जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, शायद ही किसी यात्री को करना पड़ा हो। विचार करो कि उनके आगे-पीछे सैकड़ों मील तक न किसी जीवधारी का पता था और न किसी तरह की बस्ती के चिह्न थे। चारों ओर बर्फ़ के अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखलाई देता था। प्रचण्ड वायु के झोंके बर्फ़ के टुकड़ों को उड़ा उड़ाकर आँखों और चेहरों को घायल कर रहे थे। साथ की बर्फ़ानी गाड़ियों का खींचना तूफ़ान और आँधी में कठिन हो रहा था। इस कारण चाल भी बहुत धीमी थी, यहाँ तक कि शारीरिक शक्ति भी लुप्त हो गई थी। कप्तान स्काट ने अपने रोज़नामचे में एक स्थान पर लिखा है कि "यूनस बेचारा बहुत थक गया है। उसके हाथों में छाले पड़ गये हैं। बर्फ़ के टुकड़ों से जो वायुमंडल में उड़ रहे हैं, उसका मुखमंडल तथा नासिका रक्तमय होगई है। वह

अत्यंत दुखी है। ये कुछ अच्छे लक्षण नहीं हैं। ओट्स का पाँव सर्दी से बेकाम हुआ जाता है। हम लोग अपने डिपो से १३ मील की दूरी पर हैं आशा है कि कल तक वहाँ पहुँच जायँगे।"

किन्तु दुःख की बात है कि दूसरे दिन भी उनको इसी भाँति तूफ़ान से भिड़ना पड़ा और यद्यपि उनका डिपो वहाँ से केवल सात मील रह गया था, तो भी वे वहीं रुकने के लिए मजबूर हो गये। इस कारण तूफ़ान और आँधी में उनको मार्ग सुझाई न देता था और जब बर्फ़ की अधिकता तथा तूफ़ान के प्रचण्ड वेग से वे रास्ता भी भूल गये थे तब भूख और जाड़े के कारण उन्हें मृत्यु नज़दीक आती देख पड़ने लगी। वे प्रतिदिन आठ मील की यात्रा करते थे। उन्होंने हिसाब लगाकर विचार किया कि यदि बर्फ़ानी तूफ़ान की यही दशा रही तो दूसरे डिपो तक पहुँचना बहुत असंभव होगा और वे निश्चय थक कर भूख के मारे कहीं मार्ग में ही मर जायँगे। किन्तु २८ जनवरी को मौसम कुछ अच्छा हो गया और मार्ग भी अच्छा मिल गया। अतएव वे रविवार के दिन से १६ मील प्रतिदिन के हिसाब से अपना मार्ग काटने लगे। कप्तान स्काट अपने रोज़नामचे में इस अवसर पर लिखते हैं—

"यदि मौसम इसी प्रकार साफ़ रहा तो हम लोग अपने अगले डिपो पर बहुत शीघ्र पहुँच जायँगे। हम लोगों को भूख सता रही है और दिन प्रतिदिन हम दुबले होते चले जा रहे हैं। परस्पर खाने-पीने की चर्चा बड़े शौक़ से हो रही है। दैवी

कृपा से हम शीघ्र डिपो पहुँच कर खाने के टिन खोलने का आनन्द प्राप्त करेंगे।"

इसके बाद दो दिन की यात्रा संतोषजनक रही। किन्तु अब दूसरी विपत्ति से मुठभेड़ हुई, वह यह कि वेल्सन के पाँव में मोच आ गई। उसका परिणाम यह हुआ कि वे अपने साथियों के साथ साथ चलने में असमर्थ रहे।

बेचारे यूनस के हाथ में पहले ही चोट आ गई थी। गिर जाने से कप्तान स्काट का कंधा भी घायल हो गया था। इस पर भोजन की न्यूनता अलग थी। फिर भी सब लोग किसी न किसी प्रकार घसिटते हुए चले जा रहे थे। इसी दशा में यूनस एक बर्फ़ की दराज़ में गिर पड़ा, जिससे उसको बहुत चोट लगी। इतने पर भी वे लोग भूख से पीड़ित, थकान और सर्दी सहन करते हुए चले जा रहे थे।

कभी-कभी उनकी दृष्टि आकाशमंडल पर जाती थी। वे देखते थे कि बर्फ़ अधिकता से पड़ रही है। उनके चारों ओर बर्फ़ का एक विस्तृत मैदान देख पड़ता था। कभी उनका विचार होता, अब सब प्रयत्न निष्फल है। हम लोग शायद एक ऐसे भाग में पहुँच गये हैं, जहाँ बर्फ़ के सिवा और कोई वस्तु नहीं है। वे यह भी सोचने लगते थे कि हमारा मस्तिष्क नष्ट तो नहीं हो गया है और अब इस भाग से छुटकारा मिलना कठिन है। किन्तु वे एक एक प्याली चाय और थोड़ा बिस्कुट खाकर फिर

प्रफुल्लचित्त हो जाते और परस्पर मनोविनोद करके चित्त को शान्त करते हुए फिर तेज़ी से चलने लग जाते।

यूनस की मृत्यु

बेचारे यूनस की दशा दिन-प्रतिदिन शोचनीय होती जा रही थी। उसका चलना कठिन हो रहा था। इसलिए उसके साथियों ने उसको अपने साथ की बर्फ़ानी गाड़ी (स्लेज) पर बिठाकर खींचना प्रारम्भ किया। उस समय कम से कम ९ मील प्रतिदिन की चाल से उन्हें चलना चाहिए था, ख़ाली गाड़ियों को खींचना कठिन हो रहा था। परन्तु यूनस ने अन्त में बर्फ़ानी गाड़ी पर चलने से इनकार कर दिया। कप्तान स्काट ने उसको पकड़ कर फिर स्लेज पर बैठाना चाहा, किन्तु देखा तो उसकी दशा बहुत ख़राब हो गई थी। बड़ी कठिनाई से सब लोगों ने उसको बर्फ़ानी गाड़ी पर बैठाया। वे ख़ेमे के निकट पहुँचने को ही थे कि बेचारे यूनस की मृत्यु हो गई। यह घटना १७ फ़र्वरी १९१२ की है। अब फिर कुछ व्यवस्था अच्छी हो गई। जो भोजन-सामग्री वे डिपो में छोड़ गये थे, सब मिल गई। अब उनको आशा हो गई कि आगे चलकर उनको कुत्ते भी मिल जायँगे, जो बर्फ़ानी गाड़ियाँ खींचेंगे। अब उन्होंने रोज़ साढ़े ग्यारह मील चलने का निश्चय किया। उनमें एक नवीन जीवन का संचार हो गया, किन्तु कुछ दूर चलने के पश्चात् फिर कठिनाइयाँ सामने आने लगीं। बर्फ़ानी

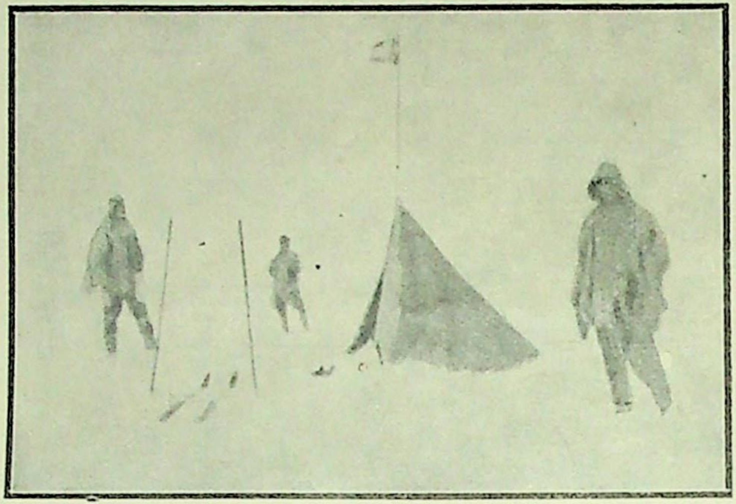
मैदान में बड़े बड़े बर्फ़ के टुकड़े कहीं कहीं फ़ैले हुए थे। उन पर गाड़ियों का खींचना बहुत कठिन हो गया। इस सम्बन्ध में कप्तान स्काट ने अपने रोज़नामचे में लिखा है—

"भगवान् हमारी सहायता करें। हम तो ये गाड़ियाँ किसी प्रकार नहीं खींच सकते"। ४ मार्च तक उनके साथ की भोजन-सामग्री समाप्त हो गई। केवल एक प्याला कोको और थोड़ा-सा सूखा मांस बाक़ी रह गया था। अब इन वीरों के छोटे दल के एक व्यक्ति की दशा बहुत ख़राब होने लगी। यह ओट्स था। इसकी छः उँगलियाँ पाले के कारण बेकार हो गई थीं। मुखमंडल पर मृत्यु के स्पष्ट चिह्न दिखाई देने लगे। दूसरे लोगों की दशा भी ऐसी शोचनीय हो गई थी कि वे कठिनता से उसकी कुछ सहायता कर सकते थे। कप्तान स्काट ने अपने रोज़नामचे में लिखा है।

"खेद! हम लोग एक दूसरे की अधिक सहायता नहीं कर सकते। वेलसन किसी प्रकार ओट्स के पाँव का कुछ प्रबंध कर रहा है"।

ओट्स की मृत्यु

परन्तु खेद है कि कप्तान स्काट के यह लिखने के बाद ही ओट्स की दशा अधिक बिगड़ने लगी और उसका चलना कठिन हो गया। भोजन-सामग्री की कमी तथा बर्फ़-वर्षा की अधिकता से विवश होकर सबको रुकना पड़ा। ओट्स ने अपने



केप्टन स्काट का डेरा

दोनों साथियों से कहा कि तुम लोग मुझको यहीं छोड़ दो। मेरे कारण तुम लोगों का चलना भी दुस्तर हो रहा है। तुम यदि मुझे यहीं छोड़ दोगे तो शीघ्र ही "वनटन डिपो" पर पहुँच जाओगे, जहाँ गाड़ियाँ खींचने के लिए तुम्हें कुत्ते भी मिल जायँगे और बड़ी सुगमता से तुम लोग मकान पहुँच जाओगे। परन्तु यदि तुम मेरे कारण घसिट घसिट कर चलोगे तो बर्फ़ तुम लोगों को भी नष्ट कर देगी। दोनों साथियों ने ओटूस की बातें सुनीं और गर्दन हिला कर चुप हो गये।

रात को चारों मनुष्य ख़ीमे में सोये। ओटूस का यह विचार था कि आज रात की नींद अंतिम है और अब उसके पश्चात् शायद फिर कभी जागना प्राप्त न हो। किन्तु अंतिम निराशा के विपरीत वह प्रातःकाल जीता-जागता उठा। ख़ीमे के बाहर बफ़ार्नी तूफ़ान का प्रचण्ड वेग था। उसने विचार किया कि मुझ कठोर हृदय को मृत्यु तो आती ही नहीं। मैं अकारण अपने साथियों को दुख दे रहा हूँ। मेरे ही कारण वे अपनी पूरी चाल से यात्रा नहीं कर सकते, इसलिए वह स्वयं प्राण दे देने के लिए ख़ीमे से बाहर तूफ़ान में निकल गया और सदा के लिए अपने साथियों से छूट गया। यह घटना १६ मार्च सन् १९१३ ई० की है।

कप्तान स्काट तथा उसके साथियों की मृत्यु

अब कप्तान स्काट के साथ उनके अपने दो ही साथी रह गये। "वनटन डिपो" इस स्थान से केवल २१ मील दूर रह गया

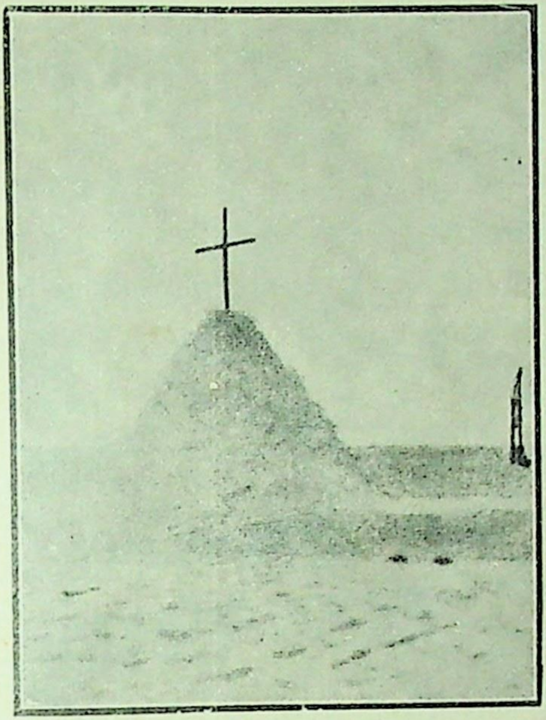
था, जहाँ भोजन, ईंधन तथा हर प्रकार की सामग्री उपस्थित थी। किन्तु शोक की बात है कि वहाँ पहुँचना उनके भाग्य में ही न था। उनके पाँव बेकाम हो गये थे। उनकी चाल एकदम धीमी हो रही थी। अंत में जब उनका डिपो केवल साढ़े ग्यारह मील रह गया तब उन लोगों ने विचार किया कि अब आशा करना बिलकुल व्यर्थ है। बर्फ़ानी तूफ़ान ने एक दुराचारी लुटेरे की भाँति उनके ख़ीमे को घेर लिया। भोजन तो उनके पास दो दिन के लिए था, किन्तु ईंधन बिलकुल समाप्त हो गया था। अंत में अधीर होकर छोटे बालकों के समान उन्होंने वह भोजन भी फेंक दिया और काल के गाल में जाने के लिए अपने ख़ीमे में लेट गये।

मास्टर मदन—तो फिर वे सब लोग मर गये ?

ताऊ जी—हाँ !

मास्टर मदन—तो फिर ये सब घटनायें कैसे ज्ञात हुईं ?

ताऊ जी—इसके कई मास पश्चात् जब कप्तान स्काट तथा उनके साथियों की कोई सूचना न मिली तब उनकी खोज में एक दूसरा दल चला। इन लोगों को कप्तान स्काट, डाक्टर वेल्सन तथा लेफ़्टिनेंट बावर्स की लाशें मिलीं। कप्तान स्काट का एक हाथ वेल्सन के गले में था और उनके बग़ल में तीन नोट बुकें (बहियाँ) दबी पड़ी थीं। उन्हीं में उनका रोज़नामचा भी था, जिसमें उन्होंने प्रत्येक घटना का उल्लेख किया था।



केप्टन स्काट की क़ब्र

इसके अतिरिक्त कुछ चिट्ठियाँ भी थीं, जो उन्होंने मरते समय अपने इष्ट-मित्रों तथा संबंधियों के नाम लिखी थीं।

मास्टर मदन—कुछ पता नहीं कि कप्तान स्काट ने मरते समय क्या क्या लिखा होगा ?

ताऊ जी—मैं तुमको उनकी कुछ हस्तलिखित प्रति-लिपियों को संक्षेप में सुनाता हूँ—

(१) "२६ मार्च १६१२ ई०—२१ तारीख़ से तूफ़ान का वेग प्रचण्ड है। २० को हमारे पास केवल इस प्रकार ईंधन था कि कठिनाई से दो प्याला चाय और दो दिन का सादा भोजन तैयार कर सके। हम लोग प्रतिदिन ख़ेमा से बाहर जाने का विचार करते हैं, परन्तु तूफ़ान के प्रकोप से हिम्मत नहीं पड़ती। हम लोग अत्यंत शिथिल हो गये हैं। अब मृत्यु कुछ दूर नहीं है।"

(स्काट के रोज़नामचे से)

(२) "प्यारे मित्र! विदा! मुझे अपनी मृत्यु की किंचित् चिंता नहीं है। संभव है, मैं बहुत बड़ा यात्री न समझा जाऊँ, किन्तु हम लोगों ने बहुत बड़ी सफलता प्राप्त कर ली है। अब हम बिलकुल बेबस हो गये हैं। पाँव बिलकुल ठंडे पड़ चुके हैं। ईंधन समाप्त हो चुका है। भोजन-सामग्री यहाँ से दूर है। चार दिन से तूफ़ान का वेग बड़ा तीव्र है। हम लोग ख़ेमे में

पड़े हैं। न भोजन है, न ईंधन है। ऐ मेरे प्यारे मित्र ! मैं अब संसार से जा रहा हूँ। मेरे कुटुम्बियों तथा संबंधियों का ध्यान रखना।"

(एक मित्र के पत्र से)

(३) "हम लोग अत्यंत शिथिल हो गये हैं। लिखना भी दुस्तर हो रहा है। किन्तु जहाँ तक मेरा संबंध है, मैं इस यात्रा से शोकातुर नहीं हूँ। कम से कम इससे यह तो प्रकट होता ही है कि अँगरेज़ कठिनाइयाँ सहन कर सकता है, परस्पर एक दूसरे के साथ सहानुभूति कर सकता है तथा मृत्यु के समय संतोष से जान दे सकता है। हम लोग जान-बूझ कर इस आपत्ति में फँसे थे। तब शिकायत करने का कोई कारण नहीं है। हमसे जो हो सका वह हमने किया और अब हमको चाहिए कि मालिक की मौज के अधीन अपना मस्तक नीचा करें।"
